अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-39, अंक-06, 01-15 नवम्बर, 2015

''राष्ट्रों की उन्नति क्रान्ति और विकास, दोनों से हुई है। मनुष्य के विकास के लिए मृत्यु उतनी ही आवश्यक है, जितना जीवन। दोनों की समान अनिवार्यता है। मृत्यु शाश्वत सत्य है, जन्म के समान ही वह भी क्रान्ति है; जन्म के बाद का जीवन-क्रम मन्द परन्तु निरन्तर विकास है।''

—महात्मा गांधी

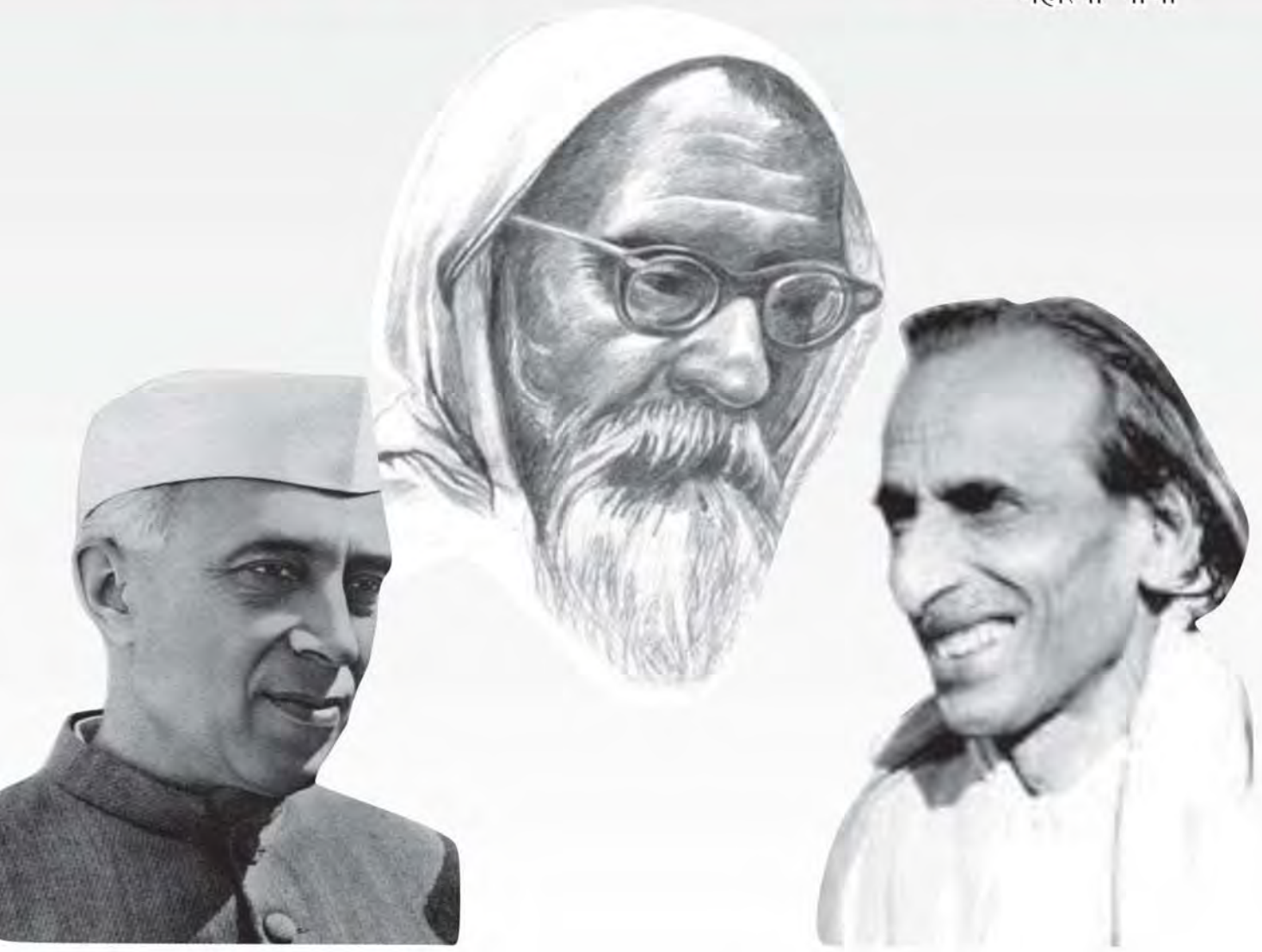

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित
अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 39, अंक : 06, 01-15 नवंबर, 2015

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	2000 रुपये
आधा पृष्ठ	:	1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ	:	500 रुपये

इस अंक में...

1. संपादकीय : लोकशक्ति निर्माण की... 2
2. खादी शताब्दी वर्ष में उपेक्षा की... 3
3. धर्म कब अधर्म बनता है... 6
4. हाथ का माहात्म्य... 7
5. क्रांतिकारी गांधी... 8
6. गांधीजी मैदान में... 11
7. 'इलनेस' उद्योग बनाम 'वैलनेस'... 13
8. टिहरी बांध के चारों ओर... 15
9. आखिर कौन बचाएगा प्राकृतिक... 16
10. स्त्री को नकारने की साजिश... 18
11. गतिविधियां एवं समाचार... 19
12. काव्य-धरोहर : 'सत्याग्रह-गाथा' 20

संपादकीय

लोकशक्ति निर्माण की चुनौतियां

आजादी के बारे में लोकशक्ति निर्माण का काम उतना नहीं बढ़ पाया, जितना चाहिए था। इस कारण राजसत्ता का दखल उन क्षेत्रों में भी बढ़ता गया, जहां लोकसत्ता का निर्माण जरूरी था। इतना ही नहीं, राजसत्ता ने अपना दायरा बढ़ाने के लिए लोक की एकता को खंडित करने का भी काम किया। भाषा, क्षेत्र, धर्म एवं जाति का उपयोग राजनीतिक प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने के लिए किया जाने लगा। फलस्वरूप मनुष्य के सामूहिक जीवन की इकाईयां टकराव का माध्यम बनने लगीं। अनेकता में एकता तभी सम्भव होती जब सामूहिक जीवन की विभिन्न प्रकार की इकाईयां, अपने-अपने वैभिन्य के बावजूद एक-दूसरे के साथ सहजीवी होतीं, एक-दूसरे को शक्ति प्रदान करतीं। किन्तु राजनीति की प्रक्रिया इससे उलटी रही। यदि लोकशक्ति का निर्माण होता तो वैभिन्य में एकता के सूत्र विकसित हो पाते।

दादरी जैसी घटनाएं, वैभिन्य को वोट-बैंक में तब्दील करने की कोशिश है। वैभिन्य को नफरत की आग में पकाया जा रहा है ताकि वैभिन्य में से एकता के सूत्र किसी हालत में विकसित न हो सकें।

लोकशक्ति का निर्माण न हो; इसमें पूंजीवादी विकास का भी निहित स्वार्थ है। क्योंकि पूंजीवाद का विकास इस पर निर्भर करता है कि लोक-जीवन को आधार प्रदान करने वाले प्रकृति-प्रदत्त उपादान किस प्रकार लोक के हाथों से छीने जा सकते हैं। जल-जंगल-जमीन व खनिज ये सभी जीवन-आधार परम्परागत समुदायों के हाथों से छीने जा रहे हैं। और, इस जीवन आधार को छीनने की नीति को 'विकास' के लिए अपरिहार्य बताया जा रहा है। इसीलिए यह विकास भी लोकशक्ति निर्माण की विरोधी है।

इस प्रकार बाहर से दिखने में दो अलग प्रकार की प्रवृत्तियां—जो लोकशक्ति निर्माण विरोधी हैं, वे अंदर ही अंदर एक-दूसरे को मदद कर रही हैं। अर्थात् वैभिन्य को नफरत की आग में पकाते रहने वाली राजनीति तथा वैश्विक पूंजीवादी बाजार प्रतिबद्ध आर्थिक निहित स्वार्थ—ये दोनों अंदर ही अंदर एक हैं।

ऐसे में सर्वोदय-विचार व गांधी-विचार से जुड़े लोगों को तीन स्तरों पर सक्रिय होना होगा। पहला, जल-जंगल-जमीन व खनिज आदि की लूट के खिलाफ व्यापक सत्याग्रह की तैयारी। क्योंकि यह मुद्दा सीधे-सीधे परम्परागत समुदायों के शोषण व दोहन से जुड़ा है। बिना ऐसे व्यापक सत्याग्रह के ग्राम-स्वराज्य की लड़ाई फलीभूत नहीं हो पायेगी।

दूसरे, इन स्थानीय स्तरों पर, लोक स्तर पर वैकल्पिक रचना के कार्य को खड़ा करना होगा। वैकल्पिक रचना का कार्य शोषण व दोहन के खिलाफ संघर्ष का दूसरा रूप है। कोई दया कार्य या राहत कार्य का हिस्सा नहीं है। यह पूंजीवाद के सहअस्तित्व में नहीं हो सकता है। सर्वोदय आंदोलन को अपने आपको उन रचनात्मक संस्थाओं से अलग करना होगा, जो पूंजीवाद या राजसत्ता की दया एवं वित्त पोषण पर आश्रित हैं।

तीसरे, लोकशक्ति निर्माण के लिए व्यापक राष्ट्रीय एकता एवं मानवीय एकता के अभियान को चलाना होगा। विभिन्न संस्कृतियों, विभिन्न जीवन शैलियों एवं विभिन्न वैचारिक विश्व दृष्टियों को उनकी स्वायत्तता के साथ, एक सूत्र में बांधने का काम ही लोकशक्ति के निर्माण का आधार बन सकेगी। भारत जितनी विभिन्नताएं कहीं नहीं हैं, न ही इन विभिन्नताओं के बीच व्यापक एकता के सूत्र अन्य कहीं उपलब्ध हैं। अतः भारत में लोकशक्ति निर्माण का प्रयोग पूरे विश्व को एक नये क्षितिज पर ले जायेगा। हम अपनी जिम्मेदारी से भाग नहीं सकते।

बिमल कुमार

वैकल्पिक रचना-जगत

खादी शताब्दी वर्ष में उपेक्षा की शिकार खादी

❑ अशोक कुमार शरण

''व्यक्ति, संगठन, संस्थाएं जो भी खादी को लेकर चिन्तित हैं, और उसके समस्याओं के समाधान का प्रयास कर रहे हैं, उनके सामने यह एक बड़ी चुनौती है कि सरकार तक अपनी बात कैसे पहुंचाएं और उनका समाधान कैसे करवायें।''

खादी शताब्दी वर्ष 2015 में खादी की दशा, दिशा के साथ-साथ इसके वर्तमान, भविष्य और भूत को दृष्टिगत रखते हुए संपूर्ण देश में खूब चिन्तन-मनन हो रहा है। एक समय आजादी की पोशाक रही, ग्रामस्वराज्य और स्वदेशी की भावना से ओतप्रोत खादी की आज ऐसी दयनीय स्थिति क्यों हो रही है कि इससे जुड़े कत्तिन, बुनकर, कारीगर और संस्थाएं सभी अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। अखिल भारत चरखा संघ की विरासत को संभाले हुए सर्व सेवा संघ तथा विनोबा भावे की प्रेरणा से संयोजित खादी मिशन वर्ष 2010 से 'खादी रक्षा अभियान' चला रहा है। इन चार-पांच वर्षों में गांधी स्मारक निधि, गांधी स्मृति दर्शन समिति और आचार्य कृपलानी ट्रस्ट ने कई सम्मेलन, गोष्ठियां आयोजित करके खादी पर अपना चिन्तन जाहिर कर सरकार तक पहुंचाया है, परंतु इस दिशा में पूर्ववर्ती सरकारों ने कोई ध्यान नहीं दिया। वर्तमान सरकार के सवा साल बीत जाने के बाद भी स्थिति में कोई आशातीत परिवर्तन नहीं नजर आ रहा है।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय खादी एक राजनैतिक अस्त्र था, जिसे उस समय के राजनेताओं ने अंग्रेजों से लड़ने के लिए खूब प्रयोग किया। खादी की यही राजनैतिक संलिप्तता आज भी कायम है, पर इसका प्रयोग विपरीत अर्थों में होने लगा है। राजनैतिक दल और सरकारें इसका प्रयोग अपनी-अपनी सुविधानुसार करते हैं।

गांधीजी के जाने के बाद अखिल भारत चरखा संघ, ग्रामोद्योग संघ तथा गांधीजी से जुड़ी अन्य संस्थाओं ने मिलकर सर्व सेवा संघ का गठन किया। खादी के कार्य की देखरेख इसी संघ द्वारा किया जाने लगा। वर्ष 1956 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू के आग्रह पर खादी ग्रामोद्योग आयोग का गठन हुआ तथा सर्व सेवा संघ ने खादी के प्रमाणीकरण से संबंधित सभी अधिकार खादी ग्रामोद्योग आयोग को सौंप दिया। आयोग के गठन के लगभग 25 वर्षों के बाद यह महसूस किया जाने लगा कि खादी का कार्य सरकारी जंजालों में फंस गया है। उस समय वर्ष 1981 में आचार्य विनोबा भावे ने खादी को सरकार से मुक्त करने का आह्वान किया। उन्होंने श्री बालविजय के संयोजन में खादी मिशन की स्थापना की। उस समय के खादी नेतृत्व, जिनमें सोमभाई, रामचंद्रनजी, पागेजी, रवीन्द्रनाथ उपाध्याय आदि शामिल थे, ने कार्य को कुछ गति प्रदान की। परंतु पुनः 25-30 वर्षों के बाद नौकरशाही, राजनैतिक अदूरदर्शिता, तेजी से बढ़ते उदारीकरण के प्रभाव और सरकार की गलत नीतियों की वजह से खादी कार्य की धार कुंद पड़ती गयी। इन सबका नतीजा यह हुआ कि सर्व सेवा संघ को पुनः सक्रिय होना पड़ा।

खादी की समस्याओं का सरकार द्वारा समाधान न होने के कारण में संस्थाओं का भी दोष है क्योंकि वे अपनी समस्याएं प्रभावी तरीके से सरकार के समक्ष नहीं रख पायीं। पिछले 15-20 वर्षों से बड़ी-बड़ी खादी संस्थाओं के सुयोग्य पुरुष खादी ग्रामोद्योग आयोग के सदस्य रहे, परंतु उनकी उपस्थिति के बाद भी खादी की उपेक्षा कायम रही। इतना ही नहीं यूपीए सरकार द्वारा खादी ग्रामोद्योग आयोग के सुधार के लिए जो कमेटी गठित की गयी थी, उसमें भी खादी संस्थाओं के प्रमुख लोग थे, जिनकी संस्तुति के आधार पर 2006 में सरकार ने खादी ग्रामोद्योग एक्ट में संशोधन किया, जिसका नतीजा आज तक खादी संस्थाएं भुगत रही हैं और एक्ट में बदलाव की मांग कर रही हैं। आज भी खादी जगत संकट के दौर से गुजर रहा है परंतु खादी पर चिन्तन-मनन करने वाली प्रमुख संस्थाएं एक साथ मिलकर कोई अभियान चलाने की स्थिति में नहीं हैं। नेतृत्व का अभाव इस क्षेत्र के लिए चिन्ता का विषय बना हुआ है।

व्यक्ति, संगठन, संस्थाएं जो भी खादी को लेकर चिन्तित हैं, और उसके समस्याओं के समाधान का प्रयास कर रहे हैं, उनके सामने एक बड़ी चुनौती यह है कि सरकार तक अपनी बात कैसे पहुंचाएं और उनका समाधान कैसे करवायें। यह चिन्ता की बात है कि जब प्रधानमंत्री 'मन की बात' में लोगों से खादी अपनाने तथा रोजगार के लिए खादी का समर्थन करते हैं तो संबंधित मंत्रालय तक बात क्यों नहीं पहुंचती और खादी ग्रामोद्योग आयोग उचित कार्यवाही क्यों नहीं करता। इन विषयों पर लगभग सभी प्रमुख संगठन सम्मेलन व गोष्ठियां आयोजित कर चिन्तन-मनन कर रहे हैं, जिसे यहां प्रस्तुत किया जा रहा है :

कानून में खादी की परिभाषा बदलने पर विचार : सरकार कानून बनाकर हमारे जीवन, समाज के मूल्यों, प्राकृतिक संसाधनों, उत्पादन, बिक्री, रोजगार आदि को नियंत्रित करती रहती है। 1956 से पहले खादी वही थी, जो हम और आप समझते हैं। उसके बाद से खादी कानून के शिकंजे में जकड़ी हुई है। अब पुनः सूक्ष्म, लघु, मध्यम मंत्रालय, भारत सरकार से

संबंधित स्थाई संसदीय समिति खादी की परिभाषा बदलने के लिए सुझाव मांग रही है। हम इसके बारे में क्या सोचते हैं, क्या कताई, बुनाई में ऊर्जा शक्ति का प्रयोग हो या नहीं, कितना हो, कैसे हो इस बारे में ठोस निर्णय लेने की आवश्यकता है। हालांकि चरखे को सौर ऊर्जा से चलाने का मन सरकार ने बना लिया है, जिसे प्रधानमंत्री स्वरोजगार योजना के अंतर्गत लाया जायेगा 'न कि खादी योजना' के अंतर्गत।

खादी में न्यूनतम मजदूरी : खादी में न्यूनतम मजदूरी का विषय गांधीजी के समय से ही चला आ रहा है। खादी को यदि कोई पूर्णकालिक रोजगार के रूप में अपनाये तो उसे प्रतिदिन 100 से 150 रुपये तक की मजदूरी मिलती है। चरखे और खड्डी में काफी सुधार के बाद भी उत्पादकता में अधिक वृद्धि नहीं हो पायी है। कुछ लोगों का मत है कि खादी योजना के अंतर्गत चरखे में सौर ऊर्जा का प्रयोग करने के बारे में सोचा जाना चाहिए, जिससे उत्पादकता बढ़ने के साथ-साथ कत्तिन-बुनकर की आय भी बढ़ सके।

खादी ब्रांड का ट्रेडमार्क संबंधी समस्याएं : क्या खादी की कहानी भी हल्दी और बासमती की भांति दोहरायी जायेगी। जब विदेशों में हल्दी और बासमती चावल को पेटेंट कर लिया गया था तो सरकार के साथ-साथ वंदना शिव जैसी सामाजिक कार्यकर्ताओं ने इसके लिए लंबी लड़ाई लड़ी थी। खादी को भारत के साथ-साथ जर्मनी, इटली, हंगरी जैसे देशों ने भी ट्रेडमार्क में रजिस्टर कर लिया है। सरकार इन देशों से बात कर रही है। परंतु इसमें हमलोगों की क्या भूमिका होनी चाहिए, यह तय हो।

अ-सरकारी खादी क्यों और कैसे : आचार्य विनोबा भावे ने बहुत पहले ही सरकारी खादी की दुर्दशा को भांप लिया था। इसके लिए उन्होंने खादी मिशन की स्थापना की। लेकिन अ-सरकारी खादी पिछले 34-35 वर्षों में पनप नहीं सकी। खादी के 'विचार' भाव पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। वस्त्र तो तैयार हो ही जायेगा और न भी हुआ तो गांधीजी के रचनात्मक कार्यों के आधार पर ग्रामस्वराज्य की कल्पना साकार हो सकेगी। खादी की पुरानी संस्थाएं भी सरकारी खादी से छूटने के लिए प्रयासरत हैं।

स्वावलंबी खादी : देश में पहले काफी लोग थे, जो स्वावलंबी खादी का प्रयोग करते थे क्योंकि उनके द्वारा काते गए सूत का कपड़ा खादी संस्थाएं निःशुल्क बनाकर देती थी। धीरे-धीरे काफी संस्थाओं ने यह कार्य करना बंद कर दिया। अब देश में केवल एक-दो संस्थाएं ही बची हैं, जो यह कार्य करती हैं। सूत कातने वालों की कमी नहीं है पर समस्या यह है कि उस सूत का क्या किया जाये, उसका कपड़ा कैसे बने। लोगों की अम्बर चरखे पर कताई करने की रूचि बढ़ रही है, पर समस्या यह है कि उनको पूनी की आपूर्ति कैसे की जाये। इसके लिए छोटे पूनी संयंत्र विकेन्द्रित व्यवस्था के अंतर्गत लगाने होंगे। यदि खादी 'वस्त्र नहीं, विचार है' की परम्परा को जीवित रखना है तो संस्थाओं को इस सूत के बुनाई की व्यवस्था न्यूनतम दरों पर करनी ही होगी।

खादी संस्थाओं की संपूर्ण कर्ज-मुक्ति : खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा खादी क्षेत्र के संपूर्ण कर्ज रुपये 2408.02 करोड़ को मुक्त करने हेतु प्रस्ताव काफी समय पूर्व सरकार को भिजवाया जा चुका है। आयोग के आंकड़ों के आधार पर सरकार पर केवल रुपये 832.65 करोड़ का आर्थिक भार होगा। संस्थाओं ने बैंक कर्ज से तीनगुना अधिक भुगतान कर दिया है। इस विषय का अध्ययन भारत सरकार/आयोग द्वारा नियुक्त विशेषज्ञ संस्थाओं/विभागों द्वारा करके खादी संस्थाओं को कर्ज-मुक्त करने की अनुशंसा की जा चुकी है।

समस्त रिकवरी तत्काल स्थगित की जाये : खादी ग्रामोद्योग आयोग एक ओर संस्थाओं के संपूर्ण कर्ज-मुक्ति के लिए भारत सरकार से अनुशंसा करता है, दूसरी ओर संस्थाओं से सीबीसी कर्ज की किश्त व ब्याज, पैनल-ब्याज आदि की रिकवरी की जा रही है, यह अंतरविरोधी कार्रवाई है। अतः जब तक उपर्युक्त पर निर्णय नहीं हो जाता रिकवरी स्थगित रखी जाये।

खादी मार्क रेगुलेशन रद्द किया जाये : कोई भी मार्का वस्तुओं की गुणवत्ता के प्रतीकस्वरूप होता है ताकि ग्राहकों की संतुष्टि हो सके। वूल मार्क, सिक्ल मार्क, होलोग्राम मार्क आदि न तो ग्राहकों और न ही उत्पादनकर्ताओं पर थोपे गये हैं, परंतु खादी मार्का जबरन थोपा गया काला कानून है। इससे खादी को आजादी से पूर्व मिल रही अनेकों टैक्स, ओक्ट्रय आदि छूट से वंचित होना पड़ेगा। खादी आजादी के संघर्ष की प्रतीक, देश के लिए हेरिटेज है। खादी मार्का रेगुलेशन 2013 खादी के हेरिटेज स्वरूप को समाप्त कर व्यक्तिगत व्यवसायियों, फर्मों, कम्पनियों के हाथ में मुनाफा कमाने वाली कमोडिटी के रूप में चला जायेगा। यह महात्मा गांधी के ट्रस्टीशिप के सिद्धांत एवं 'न लाभ न हानि' की पद्धति पर आधारित खादी कार्यक्रमों के मूल अवधारणा के विपरीत है। अतः इसे तत्काल प्रभाव से रद्द किया जाये।

ब्याज उपादान पात्रता प्रमाण-पत्र में सुधार : आयोग इस योजना के अंतर्गत बैंक से कर्ज उपलब्ध करवाता है, जिसमें संस्थाओं को 4% और बाकी ब्याज आयोग वहन करता है। बैंक अपनी पद्धति अनुसार सारा ब्याज संस्थाओं के खाते में जमा कर देता है। आयोग अपने हिस्से का ब्याज काफी देर से बैंक में जमा करता है, जिससे न केवल संस्थाओं की कार्यशील पूंजी रुक जाती है बल्कि आयोग के हिस्से के ब्याज पर भी ब्याज देना पड़ता है। इसमें सुधार की आवश्यकता है। बैंक प्रतिमाह सीधे यह ब्याज नोडल बैंकों के माध्यम से आयोग के खाते में जमा करे।

केन्द्रीय पूनी संयंत्रों की उपयोगिता पर विचार : खादी को महंगी करने में आयोग द्वारा संचालित इन पूनी संयंत्रों की बड़ी भूमिका है। आयोग द्वारा खादी संस्थाओं पर दबाव डालकर बाजार से कईगुना अधिक

महंगी दरों पर पूनी खरीदने के लिए विवश किया जाता है। इसकी गुणवत्ता भी बाजार की पूनी से अच्छी नहीं होती। आयोग या तो बाजार भाव और अपने संयंत्रों के भाव का अंतर वहन करे या संस्थाओं को बाजार से पूनी खरीदने की अनुमति प्रदान करे।

संस्थाओं के कर्ज से अधिक सम्पत्तियों के कागजात वापस करना : इस संबंध में आयोग देश के किसी भी कानून को मानने के लिए तैयार नहीं है। न तो अपने ही लोन रूल और न ही संविधानसम्मत सर्वमान्य परिपाटी। आयोग ने जितना लोन संस्थाओं को दिया है, उतनी सम्पत्ति के कागजात इक्वीटेबल मोर्टगेज के नियमानुसार रखकर बाकी सम्पत्तियों के कागजात संस्थाओं को वापस करे ताकि इन सम्पत्तियों का उपयोग कर संस्थाएं खादी एवं गांधीजी के अन्य रचनात्मक कार्यों के लिए कार्यकारी पूंजी जुटा सके। इससे अनायास कानूनी हस्तक्षेपों से बचा जा सकेगा।

डायरेक्ट टैक्स कोड : प्रिवीपर्स कौंसिल के समय से ही खादी को टैक्स के दायरे से बाहर रखा गया है। आयकर अधिनियम 1961 की धारा 10(23-बी) के अंतर्गत खादी को आयकर से छूट प्राप्त है। प्राप्त जानकारी के अनुसार भारत सरकार की आगामी वित्तीय वर्षों से डायरेक्ट टैक्स कोड लागू करने की योजना है, जिसमें खादी पर आयकर छूट वाला प्रावधान नहीं है। खादी संस्थाएं भारत सरकार के कार्यक्रम के अनुसार ग्रामीण रोजगार देने का कार्य बिना लाभ के कर रही हैं। अतः इसकी आय यदि कोई होती है तो उसे करमुक्त रखा जाये, इससे रोजगार सृजन के कार्यक्रमों को बढ़ावा मिलेगा।

एमडीए एवं अन्य भुगतान : भारत सरकार द्वारा वर्ष 2010 से एमडीए योजना लागू की गयी थी। इसके प्रावधानों के अनुरूप आयोग भुगतान नहीं कर रहा है और प्रतिवर्ष नये-नये प्रावधान जोड़ता जा रहा है, जिससे संस्थाओं को कठिनाई हो रही है। संस्थाओं की बड़ी राशि रुक जाने के कारण कत्तिन-बुनकरों को भुगतान में कठिनाई हो रही है। इसके अतिरिक्त पुराने रिबेट और एकमुश्त भुगतान की कुछ राशि बकाया है। पूंजी के अभाव में कार्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस सम्बन्ध में अविलम्ब कार्यवाही किये जाने की आवश्यकता है।

कौशल विकास : देशभर में खादी और ग्रामोद्योग संस्थाओं द्वारा 16 प्रशिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे हैं। माननीय प्रधानमंत्रीजी के कौशल विकास कार्यक्रम के अनुरूप इन प्रशिक्षण केन्द्रों को और मजबूत कर प्रशिक्षण के टारगेट बढ़ने चाहिए थे। परंतु आयोग ने एक परिपत्र जारी कर इन केन्द्रों की आगामी वित्तीय वर्ष से स्टाफ सहायता बंद करने का अनायास निर्णय लिया है जो कार्यक्रम के हित में नहीं है। आयोग यह कदम तत्काल वापस ले और इन केन्द्रों के साथ मिलकर सरकार के कौशल विकास कार्यक्रम के अनुरूप खादी ग्रामोद्योग संस्थाओं के प्रशिक्षण केन्द्रों को पूर्व की भांति सहायता देना जारी रखे।

महात्मा गांधी की स्वदेश वापसी और खादी शताब्दी वर्ष : राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सन् 1915 में स्वदेश वापसी पर देश से गरीबी मिटाने और स्वावलम्बी होने की दिशा में चरखा आरम्भ किया जो आगे चलकर देश को स्वतंत्र कराने का प्रमुख अस्त्र बना। यह वर्ष खादी शताब्दी वर्ष और महात्मा गांधी का स्वदेश वापसी का भी शताब्दी वर्ष है। इसका आयोजन किस प्रकार किया जाये ताकि गांधी विचार और खादी कार्यक्रम मजबूत बन सके। ❑

राष्ट्रीय महिला शिविर

सर्व सेवा संघ द्वारा **माता कस्तूरबा गांधी** की पुण्यतिथि के अवसर पर **20 से 22 फरवरी, 2016** तक **सेवाग्राम (महाराष्ट्र)** में **राष्ट्रीय महिला शिविर** का आयोजन किया जा रहा है। शिविर का उद्देश्य महिलाओं की दक्षता और वैचारिक आधार को विकसित करना तथा सर्वोदय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना है।

इस शिविर में देशभर की महिला सर्वोदय कार्यकर्ता, सर्वोदय परिवारों की सक्रिय महिलाएं तथा गांधी-विचार से जुड़ी बहनें शामिल होंगी। भाग लेने वाली बहनों से अनुरोध है कि वे **19 फरवरी, 2016 को सेवाग्राम पहुंच जायं। 22 फरवरी की शाम 5 बजे तक शिविर चलेगा।** अंतिम समय में परेशानी न हो, इसलिए शिविर में भाग लेने वाली बहनें अपना रेल आरक्षण शीघ्र करा लें।

सर्वोदय आंदोलन में महिलाओं के महत्त्व से आप परिचित होंगे ही, उन्हें आगे बढ़ाना तथा नेतृत्व की भूमिका में लाना हमारी विशेष जिम्मेवारी है।

आपसे निवेदन है कि अपने प्रदेश से उक्त भूमिका वाली बहनों को शिविर में भेजें। साथ ही उनके नाम, पते और फोन नंबर हमें भी भेजें ताकि हम भी सीधे उनसे सम्पर्क कर सकें। ऐसी महिलाओं को प्राथमिकता दें, जिनसे भविष्य में सक्रिय भूमिका निभाने की अपेक्षा हो।

शिविर में निवास एवं भोजन की व्यवस्था निःशुल्क रहेगी। आने-जाने का खर्च शिविरार्थियों को स्वयं या सर्वोदय मंडल के सहयोग से वहन करना होगा।

समय : 20-21-22 फरवरी, 2016 (शनिवार-रविवार-सोमवार)
स्थान : सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम-442102 (महाराष्ट्र)
सम्पर्क : 07152-284061/91

शोभा शिराढोणकर
मंत्री, सर्व सेवा संघ

महादेव विद्रोही
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

अध्यात्म

धर्म कब अधर्म बनता है?

❑ दादा धर्माधिकारी

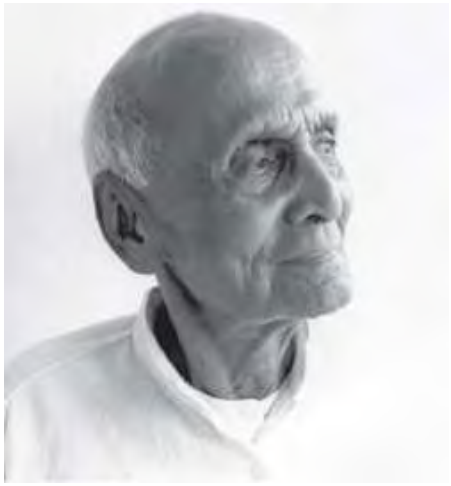

'धर्म' जब व्यावर्तक हो जाता है, तब वह अधर्म या सम्प्रदाय बन जाता है। व्यावर्तक यानी अलगाव वाला—इतने हमारे, बाकी हमारे नहीं, यह बात जब आ जाती है, तब धर्म 'अधर्म' बन जाता है।

विनोबा ने एक दफा बड़े मजे की बात कही थी। किसी ने उनसे पूछा कि ''आप महाराष्ट्रीय ब्राह्मण हैं, तो कोंकणस्थ हैं या देशस्थ?'' उन्होंने कहा, ''मैं देश में रहता हूं, इसलिए 'देशस्थ' हूं। काया में रहता हूं, इसलिए 'कायस्थ' हूं और सबसे आखिर में मैं अपने में रहता हूं, इसलिए 'स्वस्थ' हूं। तो सब-कुछ हूं। ऐसा सवाल ही आप मुझसे क्यों पूछते हैं? मैं हिन्दू हूं, इसलिए मुसलमान नहीं हूं ऐसा नहीं है। मैं हिन्दुस्तान में रहता हूं, इसलिए तुर्किस्तान मेरा नहीं, ऐसा नहीं है। हरिजन आश्रम में हूं, इसलिए अहमदाबाद और गुजरात में नहीं हूं, ऐसा नहीं है।''

धर्म में व्यापक वृत्ति होती है। धर्म व्यापक होता है। सम्प्रदाय संकीर्ण होता है। हम कह चुके हैं कि विचार जब जम जाता है, तो उसका सम्प्रदाय बन जाता है। सम्प्रदायों में संघर्ष होता है। धर्म संघर्ष के लिए नहीं है। धर्म मनुष्य से मनुष्य को मिलाने के लिए है। मनुष्य से मनुष्य को अलग करने का रास्ता 'अधर्म' है।

पूछा जायेगा कि अधर्म क्यों धर्म के रूप में आता है? बात साफ है। शैतान आयेगा, तो भगवान् के नाम से ही आयेगा। शैतान का अपना स्वरूप इतना कुरूप, भद्दा है कि वह भगवान् का ही नाम-रूप लेगा। दुनिया में जितने धर्म हैं, जिनके कारण विरोध होता है, सख्य नहीं होता है, वे सबके सब 'अधर्म' हैं।

सम्प्रदाय-निराकरण

हम संकल्प कर लें कि हम जैसे वर्ग-निराकरण चाहते हैं, जाति-निराकरण चाहते हैं, वैसे ही हमें सम्प्रदाय-निराकरण भी करना है।

इस बारे में अब हमें एक कदम आगे चलना है। गांधी सर्वधर्म-समभाव तक आये। अब हमें आगे बढ़ना है। बाप से बेटा आगे न जाय, तो समझदार बाप नाराज होगा। कोई कहता है, मेरा बाप बड़ा है, तो उससे सब यही कहते हैं कि ठीक है, तुम उससे आगे बढ़ो। अगर मुझसे कोई आकर कहता है कि तुम्हारा बेटा ठीक तुम्हारे जैसा है, तो मुझे दुःख होगा। इससे अधिक नुकसान क्या हो सकता है? हर बाप की आकांक्षा रहती है कि मेरा बेटा मुझसे सवाया हो, मुझसे आगे बढ़े।

मार्क्सवादियों से मैं अक्सर कहा करता हूं कि मैं तुमसे मार्क्स का अधिक भक्त हूं। पर तुम लोग कहते हो कि मार्क्स से आगे कोई कुछ कहे, तो वह प्रतिगामी है। मैं कहता हूं कि हम इतने बड़े आदमी के बाद पैदा हुए, फिर भी हम आगे नहीं बढ़ सकते, तब तो उसके बड़प्पन में बट्टा लगेगा। सारी प्रगति ही रुक गयी, ऐसा कहना होगा।

धर्म और धर्मान्तर

गांधी ने एक बहुत बड़े स्थान तक हमें लाकर छोड़ा है। उन्होंने सिखा दिया कि सारे धर्मों को समान समझो। तो लोगों ने उसका अर्थ यह किया कि सब धर्म समान हैं, इसलिए किसी भी धर्म में जाओ, वह एक ही है। यह तो स्थूल अर्थ है।

यह बात संविधान-परिषद् में उठी थी। मूलभूत अधिकारों की चर्चा करते समय हरएक को अपने-अपने धर्म के अनुसार चलने का मौलिक अधिकार दिया जा रहा था। तब तक ईसाई सज्जन खड़े हुए और कहने लगे कि ''हरएक को अपने धर्म का प्रचार करने का भी हक हो।'' तो उनसे व्यक्तिगत रूप में मैंने कहा कि ''आपने यह कैसी बात कही? सबको अपने धर्म के पालन का समान अधिकार हो, यहां तक तो दुरुस्त है, लेकिन उसका प्रचार करने की बात तो गलत है।'' उन्होंने तो मेरी बात मान ली। लेकिन मेरे हिन्दू मित्र खड़े हो गये और कहने लगे कि ''यह तो आपने भयानक बात कर दी। आप तो ऐसी बात करते हैं कि जिससे जो हिन्दू जबरदस्ती मुसलमान या ईसाई बनाये गये हैं, उन्हें हिन्दू-धर्म में वापस नहीं लाया जा सकेगा।'' तो मैंने कहा कि ''यह बात तो गलत हुई। धर्म की बात में संख्या से क्या मतलब? ऐसा लगता है कि आप चुनाव की या प्रतिनिधित्व की दृष्टि से बात कर रहे हैं। यह तो धर्म की बात नहीं है। यदि सारे धर्म समान हैं, तो दूसरे धर्म में जाने की जरूरत ही क्या? दूसरे धर्म में जाने के दो ही कारण हो सकते हैं—लोभ या मुमुक्षा। या तो मैं यह मानता हूं कि दूसरा धर्म मुझे भगवान् की ओर ले जाने के लिए अधिक उपयुक्त है या फिर यह लोभ है कि दुनिया में सुविधाएं पाने की दृष्टि से दूसरा धर्म अधिक लाभदायी है। सुविधा की बात तो धर्म-अधर्म की बात नहीं है। ईश्वर-भक्ति की, मुमुक्षा की दृष्टि से यदि कोई कार्य श्रेष्ठ और कोई कनिष्ठ है, तब तो सारे धर्म समान नहीं रह जाते।'' ❑

11 नवंबर : विनोबा ब्रह्म-निर्वाण

हाथ का माहात्म्य

❑ विनोबा

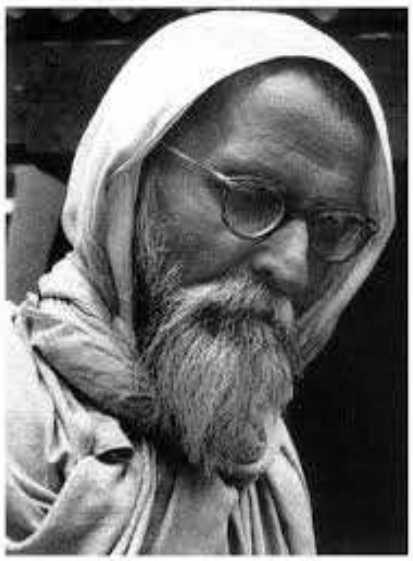

मनुष्य की यह एक बड़ी विशेषता है कि भगवान ने उसको हाथ दिये हैं। अभी मनुष्य को इसका पूरा ज्ञान और ध्यान नहीं हुआ है। पशु-पक्षियों के हाथ नहीं हैं। हाथ केवल मनुष्य को मिले हैं। हमको अपने इन हाथों का माहात्म्य समझना चाहिए।

भगवान ने हमको जो हाथ दिये हैं, वे तो काम करने के लिए हैं। अपने दो हाथों से हम बहुत-कुछ पैदा कर सकते हैं। एक-दूसरे के हाथ हिल-मिलकर इन्हीं दो हाथों से हम तरह-तरह के काम कर लेते हैं। अपने इन्हीं दो हाथों से अपनी पैदा की हुई चीजें हम सबको बांट सकते हैं। मनुष्य का यह बड़ा सौभाग्य है कि वह इन तीनों कामों को भलीभांति कर सकता है। इन्हीं कामों के लिए भगवान ने उसको हाथ दिये हैं।

जानवरों के हाथ नहीं होते। इसलिए कोई भी चीज पैदा करना उनके लिए कठिन होता है। दुनिया में जो भी कुछ पैदा होता है, वह जानवर उस सबको इकट्ठा कर सकते हैं। कुछ जानवर शिकार भी करते हैं। किन्तु चीजों को पैदा करने का काम तो मनुष्य ही कर सकता है। पशु या पक्षी न तो पेड़ों को पानी पिलाते हैं, और न उनको खाद ही देते हैं। एक मनुष्य ही यह काम करता है। पक्षी फसल को चुग सकता है। बन्दर फसल को नष्ट कर सकते हैं। बन्दरों के हाथ तो होते हैं, पर उनसे वे तोड़-फोड़ ही कर पाते हैं।

अतएव मनुष्य की विशेषता ही इस बात में है कि वह उत्पादक श्रम कर सकता है। देश की आबादी के दोगुने हाथ हमारे देश में हैं। किन्तु देश में जितनी पैदावार होनी चाहिए, उतनी होती नहीं है। क्योंकि दोनों हाथों को काम नहीं मिलता। क्या बाहर से लाकर कोई हमको काम देने वाले हैं? इस बात में कोई दम नहीं है। इसके लिए तो हर आदमी को खुद ही कोशिश करनी होगी कि उसके हाथ रोज कम-से-कम आठ घंटे काम करें।

आज तो जिधर देखो उधर गोबर के लोंदे पड़े मिलते हैं। अगर कोई इनको उठाकर खेतों में डालना शुरू कर दे, तो उसको काम मिल जाय। जगर-जगह हड्डियां बिखरी पड़ी रहती हैं। कोई उनको इकट्ठा करने लगे, तो उसको काम मिल जाय। ऐसे तो कई काम हैं। नये-नये काम खोजने की बात तो एक ओर रही। पर जिन कामों को हम सैकड़ों सालों से करते आ रहे थे, हमने उनको भी छोड़ दिया है। हम सब कपड़े तो पहने हैं, पर हममें से न तो कोई कातते हैं और न कोई बुनते ही हैं। इस तरह हमारे पास जो काम पहले से चले आ रहे थे, हमने उनको भी छोड़ दिया है। ऐसी हालत में हमारे देश में एक शिकायत यह की जाती है कि यहां उत्पादन कम होता है। एक चीन देश को छोड़ दें, तो हमारे देश में काम करने की शक्ति सबसे अधिक है, फिर भी काम होता नहीं है। यही एक सवाल हमारे सामने है। भगवान ने तो काम करने के लिए हमको हाथ दे रखे हैं।

दूसरी बात यह है कि हाथों से हिलमिल कर काम किया जा सकता है। कुछ काम तो ऐसे होते हैं कि उनको एक साथ मिलकर ही किया जा सकता है। वे अकेले-अकेले किये ही नहीं जाते। यदि हमको हाथ न मिले होते, तो हम एक-दूसरे का मुंह ताकते हुए बैठे रहते। किसी की मदद क्या कर पाते? लेकिन हाथों के कारण एक-दूसरे की सेवा कई प्रकारों से की जा सकती है। किन्तु अपने इस देश में हमारे हाथ हिलमिल कर काम नहीं करते। यहां कुछ लोगों को अछूत माना जाता है। उनको हम छूते नहीं हैं। हजारों जातियों में, फिरकों में, पंथों और संप्रदायों आदि में बंट गये हैं। अभी हमारे यहां कोई समरस समाज बना ही नहीं है। इसके कारण गांव की शक्ति बंट जाती है। हाथों के रहते हुए भी शक्ति इकट्ठा नहीं हो पाती।

असल में, अगर हम हाथ से हाथ मिलाने लगें, तो हमको हाथ के महत्त्व का पता चल सके। दो-दो हाथों के जुड़ने से चतुर्भुज स्वरूप बनता है। इसी प्रकार जब षड्भुज, अष्टभुज से आगे बढ़कर हजारों हाथ इकट्ठा होते हैं, तो वेदों में जिनका वर्णन **सहस्र शीर्षा पुरुषः सहस्त्रपात** के रूप में किया गया है, वे हजारों भुजाओं वाले भगवान प्रकट होते हैं। अकेला आदमी बांध नहीं बना सकता लेकिन जब गांव के सब लोग इकट्ठा हो जाते हैं, तो वे पांच-दस दिनों में ही बांध बना सकते हैं। ऐसे काम तो हमको अपने सभी गांवों में करने हैं। जब हमारे गांवों के लोग हाथ से हाथ मिलाकर और हिल-मिलकर काम करेंगे तभी हम आगे बढ़ सकेंगे।

तीसरी बात यह है कि **हाथ से हम बांट सकते हैं। हाथ में बांटने की, दान देने की शक्ति है। आजकल हम देने की बात नहीं करते। छीनने-झपटने की ही बात चलती है। हाथ का सच्चा काम है–देना, बांटना और परोपकार करना। जब मनुष्य दूसरों को देने के लिए तैयार होता है, सेवा करने की तैयारी दिखाता है, तभी धर्म की स्थापना होती है। हाथ की सार्थकता दान देने में है।**

इस प्रकार मनुष्य को ये तीन काम करने हैं। भगवान ने हमको जो हाथ दिये हैं उनके माहात्म्य को हम तभी समझ सकेंगे। ❑

11 नवंबर
जे.बी. कृपालानी जयंती

क्रांतिकारी गांधी

❑ आचार्य जे. बी. कृपालानी

किसी भी क्रान्तिकारी के सम्पर्क में जो व्यक्ति आते हैं, उनका मूल्यांकन इस बात से किया जाता है कि क्रान्तिकारी को सफल बनाने में उन्होंने क्या काम किया? अन्यथा उससे उनका स्पर्शमात्र होता है। क्रान्तिकारी के अपने निजी और भावुकतापूर्ण बंधन नहीं होते। क्रान्तिकारी का विश्वास प्राप्त करने के लिए आभिजात्य या उच्चकोटि की मेधा की आवश्यकता नहीं होती। वह तो उद्देश्य के प्रति ईमानदारी और भक्ति से ही मिल जाता है।

क्रान्तिकारी का मूल्यांकन

धार्मिक इतिहास में इसके अच्छे उदाहरण मिल जायेंगे। फिलस्तीन में ईसा ने अपने धर्म का प्रचार शुरू किया। वहाँ बहुत से विद्वान् योग्य और ईमानदार व्यक्ति थे। पर ईसा के शिष्य-समाज में नीचे-से-नीचे तबके वाले और साधारण बुद्धि के लोग, पापी, चुंगी और कर उगाहने वाले कर्मचारी, वेश्याएँ, मछुए आदि भी थे। इनमें ईसा के प्रति उन लोगों से अधिक निष्ठा और दृढ़ता थी, जिन्हें समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त था। जिसमें सच्चा विश्वास होता है, चाहे वह कितना ही तुच्छ क्यों न हो, वह नास्तिकता के पाप से तो मुक्त रहता ही है। इसी पर एक और सत्य परमेश्वर और उसका सम्बन्ध निर्भर है। मुहम्मद की क्रान्तिकारी शिक्षाओं का रहस्य यही था। उन्होंने सोचा कि उस समय समाज को इसी की सबसे अधिक आवश्यकता थी। उन्होंने ब्रह्म के एकत्व को सबसे बड़ी वस्तु बतलाया। आज भी पवित्र मुसलमान उस व्यक्ति को 'काफिर' समझते हैं, जो ब्रह्म के एकत्व में विश्वास नहीं करता। ईसाई मिशनरी और मुसलिम मुल्लाओं, दोनों की लालसा थी कि गांधीजी को वे अपने धर्म में दीक्षित कर लें। वे इस बात को जानते थे कि गांधीजी उनसे अच्छे और सही रास्ते पर थे। गांधीजी चाहे कितने ही अच्छे और बड़े क्यों न रहे हों, यदि वे उनके धार्मिक मन्तव्यों में दीक्षित नहीं हुए, तो वे अच्छे नहीं। इन मिशनरी और मुल्लाओं के लिए शुद्ध आचरण का नहीं, सही सिद्धान्तों का महत्त्व है। भले ही यह धर्मोन्मादियों का अतिशयोक्तिपूर्ण जोश हो, पर किसी-न-किसी रूप में क्रान्तिकारी के चुनाव भी उसके 'मिशन' से ही प्रेरित होते हैं। उद्देश्य के प्रति वफादारी ही क्रान्तिकारी के लिए आचरण का सबसे बड़ा मापदंड है। अन्य मापदंड इससे घटकर है।

लक्ष्य-प्राप्ति में योगदान

इसी प्रकार क्रान्तिकारी के लिए भी सिद्धान्तों पर अड़े रहने वाले तथा उसके उद्देश्य में सहायक होने वाले व्यक्ति का ही मूल्य होता है। यदि उसमें इतनी क्षमता नहीं, तो वह क्रान्तिकारी किसी काम का नहीं। गांधीजी में यही विचारधारा पायी जाती है, यद्यपि सत्य और अहिंसा तथा साधन की पवित्रता में विश्वास रखने के कारण यह काफी परिष्कृत हो चुकी थी। वे किसी से न घृणा करते थे, न किसी को आघात ही पहुँचाते थे। नैतिक विधान ही उनका धर्म था। 1926 में उन्होंने लिखा था : ''बाह्य सुधारों से अधिक आंतरिक सुधारों की आवश्यकता है। आंतरिक दुर्दशा पर खड़ा होने वाला सुन्दर विधान भी सड़ी दीवार पर सफेदी के समान होगा।'' इसलिए कोई भी व्यक्ति, यदि वह नैतिक जीवन व्यतीत करता है—चाहे वह किसी भी विचारधारा या मत-मतान्तर का क्यों न हो—तो वह धार्मिक है। पर इन सबसे ज्यादा वे उसे पसन्द करते थे, जो उनके उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक हो। उनके कोई निजी सम्बन्ध नहीं थे। गहरे और भावुकतापूर्ण सम्बन्धों को वे अच्छा नहीं समझते थे। उनके लिए प्रेम व्यक्तिगत नहीं, सामूहिक बन्धन था, जैसे गरीबों से प्रेम, मानवता से प्रेम। बहुत से व्यक्ति, विशेषतः स्त्रियाँ उनके व्यक्तिगत गुणों की महत्ता से खिंचकर उनके पास आयीं। उन्होंने उनके प्रेम और आसक्ति को उसी हद तक स्वीकार किया, जितना वे अपनी क्रान्ति के लिए उपयोग कर सकते थे। ऐसे व्यक्ति अक्सर राजनीति में दिलचस्पी नहीं रखते थे, पर गांधीजी ने उनका उन्हीं के क्षेत्र में उपयोग किया और वे लोग जेल भी गये तथा अन्य यातनाएँ भी झेलीं, जिसे वे स्वयं अपने-आप कभी न कर पाते। यदि इसका मनोविश्लेषण करें, तो यही मालूम होगा कि उन्होंने जो यातनाएँ झेलीं, वे गांधीजी के लिए थीं, देश के लिए नहीं। बाद में उन्होंने अपने मन को समझा लिया कि हमने देश-भक्ति के लिए यह सब किया, पर उनका असली उद्देश्य तो अपने आराध्य को प्रसन्न करना तथा उसकी सद्भावना प्राप्त करना ही था। इसलिए गांधीजी की मृत्यु के बाद यदि ऐसे बहुत-से लोग राजनीति मे दिलचस्पी न लें, तो हमें कोई आश्चर्य न करना चाहिए। गांधीजी के व्यक्तित्व की धुरी के हट जाने से वे राजनीति छोड़कर अपने स्वभावानुकूल क्षेत्र में फिर से चले गये, यदि उनमें कुछ राजनीति में हैं, तो वे उसमें बहुत कम दिलचस्पी लेते हैं। राजनीति में वे कोई नया कदम उठायेंगे, ऐसी आशा नहीं।

पर ये सब तो गौण बातें हैं। चर्चा का प्रमुख विषय तो यह है कि गांधीजी किसी भी स्त्री या पुरुष का मूल्यांकन उसके चरित्र से नहीं, बल्कि इस बात से करते थे कि क्रान्ति के लिए उसकी क्या उपयोगिता है। उन्होंने अपनी पत्नी का उपयोग भी क्रान्ति के लिए किया। कस्तूरबा स्वयं उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक मतों को न अपनातीं। स्वयं गांधीजी ने उनके सम्बन्ध में एकआध बार कहा भी था कि मैंने अपने विचार कस्तूरबा पर लादकर उसके प्रति हिंसा की है। उन्होंने अपने पुत्रों का लालन-पालन उसी दृष्टि से किया और अपने कार्य में उनका उपयोग भी किया। कुछ ने तो इसका विरोध भी किया था और अंत में राजनीति छोड़कर अपनी इच्छानुसार क्षेत्र भी चुन लिये। गांधीजी के दोस्त भी ऐसे ही थे। 'अली-बंधु' कुछ दिनों तक उनके 'सगे भाई'

थे। पर जब उन्होंने देखा कि वे गांधीजी का साथ न दे सकेंगे, तो हट गये। इस सम्बन्ध में दोनों ओर से अनिच्छा व्यक्त हुई, क्योंकि 'अली-बन्धुओं' का भी गांधीजी से स्वार्थ था। जब उन्होंने देखा कि उनके स्वार्थ की सिद्धि गांधीजी से न होगी, तो वे भी खिंच गये। बहुत-से व्यक्ति गांधीजी की ओर खिंचकर आये और कुछ समय उनके साथ काम किया तथा उनके विश्वासपात्र बने रहे, पर कुछ ही वर्षों में छोड़ भी गये।

क्रान्तिकारी और कला

कला के प्रति उनके दृष्टिकोण के सम्बन्ध में भी उनकी इसी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। उनके उद्देश्य की पूर्ति के लिए विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार आवश्यक था। उन्होंने देश को विदेशी वस्त्रों के जला डालने की सलाह दी। फिर क्या था? इस होली में कितनी ही सुन्दर कला-कृतियाँ स्वाहा हो गयीं, सोने-चाँदी की बुनी बहुमूल्य वस्तुएँ भी अग्नि की भेंट चढ़ गयीं। बहुत-से समझदार नरमदिल मित्रों ने ऐसा न करने की सलाह दी, पर गांधीजी ने किसी के विरोध की परवाह न की। मित्रों ने कहा कि आपके इस जोश में हिंसा की गंध आ रही है, पर गांधीजी ने एक न सुनी। वह होली स्वराज्य के लिए जलने वाली उनके हृदय की आग का प्रतीक बन गयी थी। गांधीजी ने कहा कि ये सभी बहुमूल्य कला-कृतियाँ मैल हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि उनके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ताजमहल के नाश की आवश्यकता कोई उन्हें समझा देता, तो प्रेम और सौन्दर्य की इस कृति को भी वे मिटा देते। क्रान्तिकारी गांधीजी के लिए यह कोई अनोखी बात न थी। 1922 में उन्होंने लिखा था :

''राष्ट्रों की उन्नति क्रान्ति और विकास, दोनों से हुई है। मनुष्य के विकास के लिए मृत्यु उतनी ही आवश्यक है, जितना जीवन। दोनों की समान अनिवार्यता है। मृत्यु शाश्वत सत्य है, जन्म के समान ही वह भी क्रान्ति है; जन्म के बाद का जीवन-क्रम मन्द परन्तु निरन्तर विकास है। ईश्वर सबसे बड़ा क्रान्तिकारी है। वही प्रलय की सृष्टि करता है। जहाँ क्षणभर पहले एकदम सन्नाटा था, वहाँ तूफान उठाता है। पहाड़ों को जिसे उसने अपार धैर्य और शान्ति से बनाया; उन्हें वह क्षणभर में समतल कर देता है।''

किसी उद्देश्य पर अपने को वार देने वालों ने भी ऐसे ही काम किये हैं। धार्मिक सुधार के जोश में कितने ही सुधारकों ने कितने ही मंदिर, कितने ही गिरजे, कितनी ही मसजिदें और कितने ही सुन्दर प्रासाद ढहा डाले, कितनी ही सुन्दर मूर्तियाँ तोड़ डालीं तथा अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कितनों ही के अंगच्छेद कर डाले। किन्तु अहिंसा की नीति के कारण गांधीजी ऐसे विध्वंस के कलंक से बच गये। यदि क्रान्तिकारी की भाँति उत्साह, जोश और भक्ति के साथ किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जुट जाना है, तो मानवता के कल्याण के लिए उस पर अहिंसा का अंकुश लग जाना आवश्यक है। ईश्वरीय दया के नैतिक विधान में अटूट विश्वास रखने के कारण गांधीजी पर ऐसा अंकुश सदा बना रहा। उन्होंने कहा था कि ''आत्म-शुद्धि का आध्यात्मिक अस्त्र अदृश्य रहते हुए भी बाहरी जंजीरों को काटने और वातावरण बनाने तथा पास-पड़ोस को क्रान्ति से प्लावित करने के लिए बड़ा ही अक्षुण्ण और अमोघ अस्त्र है। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रीति से कार्य करता है। यद्यपि देखने में यह परिश्रांत पथ मालूम होता है, परन्तु यह मुक्ति का सबसे सीधा रास्ता है, जिससे वहाँ शीघ्रातिशीघ्र तथा निश्चयपूर्वक पहुँचा जा सकता है। इसके लिए कठिनतम कार्य भी श्रेयस्कर है।''

अहिंसा किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सहिष्णुता, धैर्य और आत्म-त्याग सिखलाती है। गांधीजी में ये गुण पर्याप्त मात्रा में थे। इन गुणों का अंकुश लगे रहने से वे अपने जीवन में अपने उद्देश्यों को प्रधान समझते थे तथा उनकी प्राप्ति के लिए वे उतने उद्वेगशील थे, जितना कोई अहिंसक व्यक्ति हो सकता है। कौन कह सकता है कि अहिंसा में उनका इतना अटूट विश्वास न होता, तो उद्देश्यों के प्रति अपनी अपार लगन और उत्साह के कारण वे मानवता की पीठ पर एक बड़ा क्रान्तिकारी चाबुक बनकर न बैठते।

गांधीजी अपनी योजनाओं के लिए चंदा एकत्र किया करते थे। यदि कोई भिखारी अपनी आखिरी दमड़ी उनके कोष में दान देकर भूख से अपना दम तोड़ देता, तो उसकी प्रशंसा में पन्नों-पर-पन्ने रँग डालते थे। उस समय वे यह न सोचते कि कोई स्वयंसेवक उस रकम का दुरुपयोग कर सकता है। गांधीजी एक करुण आकर्षण के साथ छोटे-छोटे बालकों से चंदे में उनके सोने और चाँदी के जेवर माँगा करते थे। बेचारे अबोध बालक यह तो जानते न थे कि आखिर क्यों वे अपने चमचमाते जेवर दे रहे हैं। इन गहनों का विशेष भौतिक महत्त्व न था, पर इससे बेचारे बालकों की खुशी में कुछ कमी जरूर आ जाती थी। किन्तु किसी के जीवन से, चाहे वह किसी बालक का ही क्यों न हो, किसी क्रान्तिकारी को क्या मोह? गांधीजी ने कहा होता कि उसकी वह खुशी एक देशभक्ति के कार्य में मदद देने की खुशी के रूप में वापस मिल गयी। त्याग का मुआवजा उन्हें मिला या नहीं, इसे कौन जानता है? क्रान्तिकारी के उत्साह और उसके चरित्र को नापने के लिए कोई मापदंड नहीं है।

सच्चा क्रान्तिकारी

अतः अन्त में हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि गांधीजी नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से तो महान् थे ही, सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में भी वे बड़ी ही क्रान्तिकारी तथा पैनी सूझ-बूझ के व्यक्ति थे। 1919 में उन्होंने राजनीति में प्रवेश करते ही भारत की परिस्थितियों का सही-सही मूल्यांकन किया था। उन्होंने एक क्रान्तिकारी की भाँति परिस्थितियों के मुकाबले के लिए सक्रिय कदम उठाये, जो अहिंसक थे। भारत जैसे देश में, जहाँ आधुनिक युग के हथियारों से लैस होकर विदेशी लोग हुकूमत कर रहे थे, अहिंसा का रास्ता अपनाने के अतिरिक्त और कोई दूसरा चारा ही न था। एक सच्चे क्रान्तिकारी की भाँति उनका अपना एक सामाजिक दर्शन तथा एक योजना थी, जिसे दक्षिणी अफ्रीका में रहते हुए उन्होंने 'हिन्द स्वराज्य' में लिख दिया था। एक सच्चे क्रान्तिकारी की भाँति गांधीजी ने क्रान्ति के अपने कार्यक्रमों में जनता का सहयोग प्राप्त किया। उनमें जहाँ एक ओर क्रान्ति की अनिवार्यता का अनुभव और उद्विग्नता थी, वहीं उपयुक्त अवसर की ताक में शान्त बैठे रहने का धैर्य भी था। सफल क्रान्तिकारी की भाँति जनता की नब्ज की उन्हें सही पहचान थी। वे उसके हृदय का स्पंदन सुनते थे। राजनीति की प्रत्येक लहर का सदुपयोग करने की उनमें क्षमता थी। वे अच्छी तरह जानते थे कि कब लड़ाई छेड़नी चाहिए, कब पैंतरा बदलना चाहिए तथा कब झुक

जाना चाहिए, कब शत्रु की चुनौती स्वीकार करनी चाहिए तथा कब उसे टाल देना जाना चाहिए। चाहे स्त्री हो या पुरुष, वे सबका, उनकी नैतिक सुरुचि के अतिरिक्त, एक ही दृष्टि से मूल्यांकन करते थे, यानी भारतीय क्रान्ति में उनकी उपयोगिता।

अब तक मैंने कहीं भी गांधीजी के सत्य, अहिंसा और नैतिक गुणों पर जिनका वे प्रचार करते थे तथा जिनके ऊपर उनके सारे कार्यक्रम आधृत थे, जोर नहीं दिया है। उन गुणों के पालन का आग्रह करने मात्र से क्रान्ति में कोई मदद मिलती है, ऐसा सुझाव मैं नहीं दे सकता। मैं तो जोर देकर यह बात कहना चाहता हूँ कि यदि गांधीजी सामाजिक क्षेत्र में क्रान्तिकारी न होते तो उनके सारे नैतिक गुण धरे ही रह जाते तथा भारतीय राजनीति और उसकी स्वतंत्रता पर उनका कोई प्रभाव न पड़ता। भारत में उस समय भी कितने ही संत ऐसे थे और आज भी हैं, जिनकी आध्यात्मिक महत्ता गांधीजी से किसी तरह कम नहीं। फिर भी देश की राजनीति और समाज पर उनका कोई प्रभाव नहीं। इसे मैं अच्छा नहीं समझता। अतः इस स्थिति में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। पर यह क्रान्ति भी किसी सामाजिक क्रान्तिकारी के ही हाथों होगी, न कि किसी संत के। समाजवादी मित्रों ने कुछ समय पूर्व इसके लिए संतों, दार्शनिकों और विद्वानों की परिषद् बुलाने का सुझाव दिया था, पर इनकी ओर देखने से कोई लाभ न होगा। इनसे हमारा कुछ काम नहीं निकल सकता।

इसका अर्थ यह नहीं कि महान् संत, दार्शनिक और सुधारक लोग क्रान्तिकारी नहीं हो सकते। किन्तु यह भी सच है कि अधिकांशतः वे इस जगत् के प्राणी नहीं होते। उनका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति की मुक्ति है। हमारे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक जीवन से उनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं। वस्तुतः सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक प्रश्नों पर वे विचार ही नहीं करते। उनका मत है कि बाह्य जगत् के सारे कष्टों और उसकी सम्पूर्ण अशांतियों के बीच भी मानव की आत्मा स्वतंत्रता और मुक्ति के देश में विचरण कर सकती है। इसके विपरीत गांधीजी का मत था कि आम जनता के नैतिक और आत्मिक विकास के लिए उपयुक्त बाह्य उपकरणों की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी स्वस्थ शरीर की। गांधीजी का उद्देश्य अध्यात्म में रुचि रखने वाले कतिपय लोगों की ही सेवा न था, बल्कि उनका उद्देश्य था कि सुन्दर जीवन व्यतीत करने के लिए मानव-मात्र का नैतिक स्तर ऊँचा उठाया जाय। यह कार्य समता और न्याय के आधार पर बने समाज में ही सम्भव है। उनका कथन था कि नैतिक गुण शून्य में नहीं रहते, बल्कि सम्पूर्ण आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों में उनका समावेश सुकर है। अतः समाज को उनका परिचय होना तथा उसके लिए समाज का सुधार होना आवश्यक है, ताकि ये नैतिक गुण समाज में भी प्रतिबिम्बित हो सकें। मानव-देह की भाँति हमें सम्पूर्ण समाज को ईश्वर का मंदिर बनाना है। इनकी अवहेलना करने का अर्थ होगा, आम जनता के नैतिक जीवन को ऊपर उठाने से रोक देना। बुद्ध की अभिलाषा थी कि निर्वाण के बाद भी उनका तब तक जन्म होता रहे, जब तक संसार का प्राणी-प्राणी मुक्त न हो जाय। गांधीजी एक दूसरे प्रकार से तथा एक दूसरे ही दृष्टिकोण से प्रत्येक नर-नारी के दैनिक जीवन में नैतिकता का संचार करना चाहते थे। इसके लिए वे समता पर आधृत एक ऐसे लोकतांत्रिक समाज का निर्माण करना चाहते थे, जिसका प्रत्येक नागरिक अपने कर्तव्य को ईमानदारी से पूरा करे।

इसलिए जो लोग गांधीजी को केवल धार्मिक सुधारक, संत या महात्मा ही मानते हैं, वे उनकी शिक्षाओं और जीवन का मूल्य ही नहीं समझते। विश्व के इतिहास में सत्य और अहिंसा की यह कोई नयी सृष्टि नहीं है। ईसा, बुद्ध और दूसरे बहुत-से नये-पुराने महात्माओं ने इनका प्रचार किया था। नयी बात यह है कि इन गुणों का समाज के सामूहिक जीवन और राजनैतिक क्रान्ति में प्रयोग किया गया है। यदि गांधीजी की यही मौलिक बात भुला दी गयी, तो फिर उनका सारा 'मिशन' ही व्यर्थ हुआ।

भारत और विश्व के इतिहास में सत्य और अहिंसा का यह सामूहिक और राजनैतिक व्यवहार अभूतपूर्व है और यह सदा स्वर्णाक्षरों के समान चमकता रहेगा। ❑

मानवता को शर्मसार करने वाला है दादरी और दहिसर का कृत्य

गोवंश रक्षा सत्याग्रह समिति ने एक विज्ञप्ति में कहा है कि गोमांस-भक्षण को निमित्त बनाकर दादरी (उत्तर प्रदेश) के अखलाक भाई के परिवार की निर्मम पिटाई तथा उनकी हत्या या दहिसर (महाराष्ट्र) में गोमांस खाने वाले परिवार के साथ हुआ अभद्र व्यवहार हर देशवासी का सर शर्म से झुकाने वाला है।

इस तरह की घटनाएं वेद, उपनिषद, कुरान या अन्य सभी धर्मों में उल्लिखित आध्यात्मिक तत्त्व के खिलाफ है। ऐसा कृत्य भारतीय संस्कृति के मूल पर कुठाराघात है। जब समूची मानव सभ्यता हिंसा, धर्म के नाम पर चल रहे उन्माद से त्रस्त हो, बाजारवादी शक्तियां राजनीति को खिलौना बनाकर देश को सशक्त, स्वावलंबी एवं समृद्ध बनाने में बाधक बन रही हों या दूसरे शब्दों में आम आदमी को विकास से वंचित रखने वाली, नैसर्गिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन अपने मुनाफे के लिए करने वाली शक्ति हॉवी हो रही हो, तब देश के युवा, महिला और नागरिकों को सचेत रहना चाहिए।

गोवंश सेवा का सवाल भू-माता और भूमि-पुत्र के स्वस्थ, टिकाऊ विकास का सवाल है। आचार्य विनोबा भावे से 100 वर्ष पूर्व महात्मा फुले ने, महात्मा गांधी ने इसके पक्ष में इसीलिए आवाज उठायी। संपूर्ण सर्वोदय समाज 1977 से आज तक सभ्यता के स्थाई विकास से जुड़े इस प्रश्न को लेकर काम कर रहा है। गौरतलब है कि बाबरनामा से लेकर ताजा देवबंद के आदेश तक गोवंश रक्षा की अहमियत मानी गयी है।

हम दादरी और दहिसर की घटनाओं की घोर निन्दा करते हुए भारत के सभी धर्म, जाति एवं सम्प्रदाय के युवाओं, महिलाओं और नागरिकों से अपनी इस महान धरोहर को बनाये रखने का आवाहन करते हैं। ईश्वर हम सभी को धार्मिक उन्माद से बचने और सृष्टि के साथ समन्वय की जीवन-पद्धति का हमारा आदर्श न भूलने की शक्ति दे, यह विनम्र प्रार्थना करते हैं।

विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर करने वालों में सर्वश्री फैजल शेख (खुदाई खिदमतगार), अमरनाथ भाई (पूर्व अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ), डॉ. रामजी सिंह (पूर्व सांसद एवं ज्येष्ठ सर्वोदयी), जयवंत मठकर (अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान), डॉ. सुगन बरंठ (अध्यक्ष, अ. भा. नई तालीम समिति, सेवाग्राम), सतीश नारायण (संयोजक), शंकर बगाड़े (सह-संयोजक) एवं गोवंश रक्षा सत्याग्रह समिति के सभी सदस्य हैं।

14 नवंबर
पं. जवाहरलाल नेहरू-जयंती

गांधीजी मैदान में

❑ जवाहरलाल नेहरू

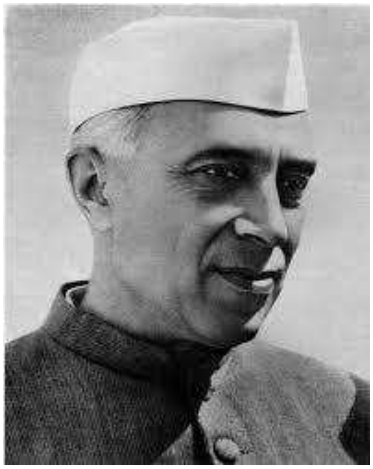

यूरोपियन महायुद्ध के अंत में हिन्दुस्तान में एक दबा हुआ जोश फैला हुआ था। कल-कारखाने जगह-जगह खड़े हो गये थे और पूंजीवादी वर्ग धन और सत्ता में बढ़ गया था। चोटी पर के मुट्ठीभर लोग मालामाल हो गये थे और उनके जी इस बात के लिए ललचा रहे थे कि बचत की इस दौलत को और भी बढ़ाने के लिए सत्ता और मौके मिलें। मगर आम लोग इतने खुशकिस्मत न थे और वे उस बोझ को कम करने की टोह में थे, जिसके तले वे कुचले जा रहे थे। मध्यम वर्ग के लोगों में यह आशा फैल रही थी कि अब शासन-सुधार होंगे ही, जिनसे स्वराज्य के कुछ अधिकार मिलेंगे और उनके द्वारा उन्हें अपनी बढ़ती के नये रास्ते मिलेंगे। राजनैतिक आंदोलन, जो कि शांतिमय और बिलकुल वैध था, कामयाब होता हुआ दिखायी देता था और लोग विश्वास के साथ आत्मनिर्णय, स्वशासन और स्वराज्य की बातें करते थे। इस अशांति के कुछ चिह्न जनता में भी, और खासकर किसानों में दिखायी पड़ते थे। पंजाब के देहाती इलाकों में जबरदस्ती रंगरूट भरती करने की दुःखदायी बातें लोग अभी तक बुरी तरह याद करते थे और कोमागाटा-मारू वाले लोगों पर षड्यंत्र के मुकदमे चलाकर जो दमन किया गया था, उसने उनकी चारों ओर फैली हुई नाराजगी को और भी बढ़ा दिया। जगह-जगह लड़ाई के मैदानों से जो सिपाही लौटे थे वे अब पहले जैसे 'जो हुकुम' नहीं रह गये थे। उनकी जानकारी और अनुभव बढ़ गया था और उनमें भी बहुत अशांति थी।

मुसलमानों में भी, तुर्किस्तान और खिलाफत के मसले पर इख्तियार किये गये रुख पर, गुस्सा बढ़ रहा था और आंदोलन तेज हो रहा था। देशभर में प्रतीक्षा और आशा की हवा जोरों पर थी, लेकिन उस आशा में चिन्ता और भय समाये हुए थे। इसके बाद रौलट-बिलों का दौर हुआ, जिसमें कानूनी कार्रवाई के बगैर भी गिरफ्तार करने और सजा देने की धाराएं रखी गयी थीं। सारे हिन्दुस्तान में चारों ओर उठे हुए क्रोध की लहर ने उनका स्वागत किया; यहां तक कि माडरेट लोगों ने भी अपनी पूरी ताकत से उनका विरोध किया। सच तो यह है कि हिन्दुस्तान के सब विचार और दल के लोगों ने एक स्वर से उनका विरोध किया था। फिर भी सरकारी अफसरों ने उनको कानून बनवा ही डाला और खास रिआयत केवल इतनी ही की गयी कि उनकी मियाद महज तीन वर्ष की रख दी गयी!

रौलट-कानून बन तो गया, मगर जहां तक मैं जानता हूं, अपनी तीन वर्ष की जिन्दगी में वह कभी काम में नहीं लाया गया, हालांकि वे तीन साल शांति के नहीं, ऐसे उपद्रव के साल थे, जो 1857 के गदर के बाद हिन्दुस्तान ने पहले-पहल देखे थे। इस तरह ब्रिटिश सरकार ने लोकमत का घोर विरोध होते हुए एक ऐसा कानून बनाया, जिसका उसने कुछ उपयोग भी नहीं किया; लेकिन बदले में एक तूफान पैदा कर लिया। इससे बहुत कुछ यह खयाल किया जा सकता है कि इस कानून को बनाने का उद्देश्य सिर्फ खलबली मचाना था।

1919 के शुरू में गांधीजी एक सख्त बीमारी से उठे थे। रोग-शैय्या से उठते ही उन्होंने वाइसराय से प्रार्थना की थी कि वह इस बिल को कानून न बनने दें। इस अपील की उन्होंने दूसरी अपीलों की तरह कोई परवाह न की और उस हालत में, गांधीजी को अपनी तबीयत के खिलाफ इस आंदोलन का अगुआ बनना पड़ा, जो हिन्दुस्तान में उनके जीवन में पहला भारत-व्यापी आंदोलन था। उन्होंने सत्याग्रह-सभा शुरू की, जिसके मेम्बरों से यह प्रतिज्ञा करायी गयी थी कि उन पर लागू किये जाने पर वे रौलट-कानून को न मानेंगे। दूसरे शब्दों में उन्होंने खुल्लमखुला और जान-बूझकर जेल जाने की तैयारी करनी थी।

जब मैंने अखबारों में यह खबर पढ़ी तो मुझे बड़ा संतोष हुआ। आखिर इस उलझन से एक रास्ता मिला तो? वार करने के लिए एक हथियार तो मिला जो सीधा खुला, और बहुत करके राम-बाण था। मेरे उत्साह का पार न रहा और मैं फौरन ही सत्याग्रह-सभा में सम्मिलित होना चाहता था। लेकिन मैंने उसके नतीजे पर—कानून तोड़ना, जेल जाना वगैरह पर—शायद ही गौर किया हो; और अगर मैंने गौर किया भी होता तो मुझे उसकी परवाह न होती। मगर एकाएक मेरे सारे उत्साह पर पाला पड़ गया और मैंने समझ लिया कि मेरा रास्ता आसान नहीं है; क्योंकि पिताजी इस नये विचार के घोर विरोधी थे। वह नये-नये प्रस्तावों के बहाव में बह जाने वाले न थे। कोई नया कदम आगे बढ़ाने के पहले वह उसके नतीजे को बहुत अच्छी तरह सोच लिया करते थे और जितना ही ज्यादा उन्होंने सत्याग्रह के प्रश्न और उसके प्रोग्राम के बारे में सोचा, उतना ही कम वह उन्हें जंचा। उन्हें यह बात बहुत बेहूदा मालूम देती थी कि मैं जेल जाऊं। जेल जाने का सिलसिला अभी शुरू नहीं हुआ था; पर यह खयाल ही उनको बहुत नागवार मालूम होता था। पिताजी अपने

बच्चों से बहुत ही मुहब्बत रखते थे। यद्यपि वह प्रेम का दिखावा नहीं करते थे तो भी उनके अंदर बहुत प्रेम भरा रहता था।

बहुत दिनों तक मानसिक संघर्ष चलता रहा और चूंकि हम दोनों जानते थे कि यह बड़ी-बड़ी बाजियां लगाने का सवाल है, जिसमें हमारे सारे जीवन में बड़ी उथल-पुथल होने की संभावना है, दोनों ने इस बात की कोशिश की कि जहां तक हो सके एक-दूसरे की भावनाओं का खयाल रखें। मैं चाहता था कि जहां तक हो सके कोशिश करूं कि उनको तकलीफ न हो। मगर मुझे अपने दिल में यकीन हो गया था कि मुझे जाना तो सत्याग्रह के ही रास्ते है। हम दोनों के लिए यह मुसीबत का समय था और कई रातें मैंने अकेले बड़ी चिन्ता और बेचैनी में काटीं। बाद को मुझे मालूम हुआ कि पिताजी रात को सचमुच फर्श पर सोने लगे। वह खुद यह अनुभव कर लेना चाहते थे कि जेल में जमीन पर सोया जा सकेगा या नहीं।

पिताजी ने गांधीजी को बुलाया और वह इलाहाबाद आये। दोनों की बड़ी देर तक बातें होती रहीं। उस समय मैं मौजूद न था। इसका नतीजा यह हुआ कि गांधीजी ने मुझे सलाह दी कि जल्दी न करो और ऐसा काम न करो जो पिताजी को असह्य हो। मुझे इससे दुःख ही हुआ; मगर उसी समय देश में ऐसी घटनाएं घट गयीं कि जिनसे सारी हालत ही बदल गयी और सत्याग्रह-सभा ने अपनी कार्रवाई बंद कर दी।

सत्याग्रह-दिवस—सारे हिन्दुस्तान में हड़तालें और तमाम काम-काज बंद—दिल्ली, अमृतसर और अहमदाबाद में पुलिस और फौज का गोली चलाना और बहुत-से आदमियों का मारा जाना—अमृतसर और अहमदाबाद में भीड़ के द्वारा हिंसा-कांड हो जाना—जलियांवाला-बाग का हत्याकांड—पंजाब में फौजी कानून के भीषण, अपमानजनक और दिल दहलाने वाले कारनामे। पंजाब मानो दूसरे प्रांतों से अलग काट दिया गया हो, उस पर मानो एक दुहेरा परदा पड़ गया था, जिससे बाहरी दुनिया की आंखें उस तक नहीं पहुंच पाती थीं। वहां से मुश्किल से कोई खबर मिलती थी और कोई न वहां जा सकता था, न वहां से आ ही सकता था।

कोई इक्का-दुक्का, जो किसी तरह उस नरक-कुंड से बाहर आ पहुंचता था, इतना भयभीत होता था कि साफ-साफ हाल नहीं बता सकता था। हम लोग जो बाहर थे, असहाय और असमर्थ थे, छोटी-बड़ी खबर का इंतजार करते रहते थे और हमारे दिल में कटुता भरती जा रही थी। हममें से कुछ लोग फौजी कानून की परवाह न करके खुल्लम-खुला पंजाब के उन हिस्सों में जाना चाहते थे; लेकिन हमें ऐसा नहीं करने दिया गया। इसी बीच कांग्रेस की तरफ से दुखियों और पीड़ितों को सहायता पहुंचाने तथा जांच करने के लिए एक बड़ा संगठन बनाया गया।

ज्योंही खास-खास जगहों से फौजी कानून वापस लिया गया और बाहर वालों को जाने की छुट्टी मिली, मुख्य-मुख्य कांग्रेसी और दूसरे लोग पंजाब में जा पहुंचे और सहायता तथा जांच के काम में अपनी सेवाएं देने लगे। पीड़ितों की सहायता का काम मुख्यतः पंडित मदनमोहन मालवीय और स्वामी श्रद्धानंदजी की देखभाल में होता था और जांच का काम मुख्यतः पिताजी और देशबंधु दास की देख-रेख में। गांधीजी उसमें बहुत दिलचस्पी ले रहे थे और दूसरे लोग अक्सर उनसे सलाह-मशविरा लिया करते थे। देशबंधु दास ने अमृतसर का हिस्सा खासतौर पर अपनी तरफ लिया था और वहां मैं उनके साथ उनकी सहायता के लिए तैनात किया गया था। मुझे उनके साथ और उनके नीचे काम करने का वह पहला मौका था। वह अनुभव मेरे लिए बड़ा कीमती था और इससे उनके प्रति मेरा आदर बढ़ा। जलियांवालाबाग से और उस भयंकर गली से, जिसमें लोगों को पेट के बल रेंगाया गया था, संबंध रखने वाले बयान, जो बाद को कांग्रेस-जांच-रिपोर्ट में छपे थे, हमारे सामने लिये गये थे।

उस साल (1919) के आखीर में मैं अमृतसर से देहली को रात की गाड़ी से रवाना हुआ था। जिस डिब्बे में मैं चढ़ा, उसकी तमाम जगहें भरी हुई थीं, सिर्फ ऊपर की एक बर्थ खाली थी। सब मुसाफिर सो रहे थे। मैंने वह खाली बर्थ ले ली। दूसरे दिन सुबह मुझे मालूम हुआ कि वे तमाम मुसाफिर फौजी अफसर थे। वे आपस में जोर-जोर से बातें कर रहे थे, जो मेरे कानों तक आ ही पहुंचती थीं। उनमें से एक बड़ी तेजी के साथ, मगर विजय के घमंड में बोल रहा था और फौरन ही मैं समझ गया कि यह वही जलियांवाला-बाग के 'बहादुर' मि. डायर हैं। वह अपने अमृतसर के अनुभव सुना रहा था। उसने बताया कि कैसे सारा शहर उसकी दया के भरोसे हो रहा था। उसने सोचा, एक बार इस सारे बागी शहर को खाक में मिला दूं। मगर कहा कि फिर मुझे रहम आ गया और मैं रुक गया। हण्टर-कमेटी में अपना बयान देकर वह लाहौर से वापस लौट रहा था। उसकी बातचीत और उसकी संगदिली को देखकर मेरे दिल को बड़ा धक्का लगा—वह देहली स्टेशन पर उतरा तो गहरी गुलाबी धारियों वाला पायजामा और ड्रेसिंग-गाउन पहने हुए था।

पंजाब-जांच के जमाने में मुझे गांधीजी को बहुत-कुछ देखने व समझने का मौका मिला। बहुत बार उनके प्रस्ताव कमेटी को अजीब मालूम होते थे और कमेटी को वह समझा लिया करते थे और कमेटी उन्हें मंजूर कर लिया करती थी। बाद की घटनाओं से मालूम हुआ कि उनकी सलाह में दूर-देशी थी। तब से उनकी राजनैतिक अंतर्दृष्टि में मेरी श्रद्धा बढ़ती गयी।

पंजाब की दुर्घटनाओं और उनकी जांच के कार्य का मेरे पिताजी पर जबरदस्त असर हुआ। उनकी तमाम कानूनी और वैधानिक बुनियाद उसके द्वारा हिल गयी थी और→

मत-सम्मत

'इलनेस' उद्योग बनाम 'वैलनेस' उद्योग

❑ डॉ. सुगन बरंठ

अभी-अभी हमने मैगी एवं योग-दिवस की चर्चाएं झेली हैं। मैगी से जुड़ी सारी चर्चाओं को आधे मिनट में समेटने वाली फिल्म में एक युवक बड़ी-सी नदी के पुल पर चलते-चलते बोल रहा है, ''तू मेरे साथ ही बोलती थी ना? फिर अब दूसरे से क्यों बतियाती है? तुझे क्या लगता है, मैं इस पुल से कूद कर जान दे दूंगा? नहीं! मैं मैगी खा लूंगा। बस दो मिनट में खेल खत्म।''

वैसे तो आज हम स्वास्थ्य के बारे में जागरूक हैं लेकिन अब स्वास्थ्य एक 'उद्योग' बन चुका है। इस 'बीमारी उद्योग' में डॉक्टर सेवा करने वाला नीतिमान व्यावसायिक नहीं, बल्कि वह सेवा देने वाला (सर्विस प्रोवाईडर) और रुग्ण ग्राहक (कस्टमर) बन चुका है। यह वैश्विक बाजारीकरण की भाषा है। सलाह दी जाती है कि यह खाओ, न खाओ, दवा खाओ और तमाम जांच भी कराते रहो। कस्बे से लगाकर शहर तक बढ़ते सुपर स्पेशियलिटी अस्पताल, जांच की दुकानें और कंपनियां, फेमिली डॉक्टरों से ज्यादा विशेषज्ञ डॉक्टरों की बढ़ती संख्या और इस सारे बाजार में हमारा होता पोपट। इनसे आप भलीभांति वाकिफ हैं। इस पूर्व निर्धारित प्रक्रिया को 'बीमारी उद्योग' (इलनेस इंडस्ट्री) कहते हैं।

गत 25 साल में हर तहसील या प्रखंड के कस्बे या छोटे-से शहर में 'जिम' नामक आधुनिक व्यायामशालाएं खुली हैं। इसी काल में सारे अभिनेता उत्तम शरीर यष्टी, बंधे हुए एवं मजबूत दिखने लगे हैं। गली-कूचों के युवाओं का भी अब यही सपना बना दिया गया है। अब इस धंधे से जुड़े व्यवसाय/उद्योग जोरों पर है। वैश्वीकरण से समाज के एक वर्ग के पास बहुत पैसा बढ़ा है। ये लोग एकदम से आरोग्य के प्रति संवेदनशील बन गये। क्या खायें, क्या ना खायें इसकी चर्चाएं व्हाट्स अप, फेसबुक, ट्वीटर आदि माध्यमों से जोरों पर हैं। सलाह दी जाती है जैविक-विषमुक्त अन्न, फल, सब्जियां ही खाएं, देशज गाय का दूध, घी खाएं। ऐसे संदेश देती अनेक दुकानें भी खुल गयी हैं। तेल तो कब का ब्रांडेड हो गया है। छोटे-छोटे कस्बों की तेल मिलों को तो काल निगल गया। नमक और दाल तक टाटा के हो गये हैं। तेल, साबुन, शेम्पू में तो कितने ही हर्बल (आयुर्वेदिक या वनस्पतिजन्य) उत्पादन बाजार में आ गये हैं। घृतकुमारी या ग्वारपाठा रस अर्थात् एलोवेरा, जामुन के सत के साथ करेला, नीम, आंवला सहित अनेक तैयार उत्पादन हम खरीद रहे हैं। असंतुलित व तनावपूर्ण जीवनशैली से, असुरक्षित जीवनवेग का जन्म हुआ है। यदि इसका लाभ न उठाये तो वह पूंजीवाद किस काम का? इसीलिए अब उन्होंने शुरू की 'वेलनेस इंडस्ट्री'। इस

→उनका मन उस परिवर्तन के लिए धीरे-धीरे तैयार हो रहा था, जो एक साल बाद आने वाला था। अपनी पुरानी माडरेट स्थिति से वह पहले ही बहुत कुछ आगे बढ़ चुके थे।

1919 के बड़े दिनों में पिताजी अमृतसर-कांग्रेस के सभापति हुए। उन्होंने माडरेट नेताओं के नाम कांग्रेस में शामिल होने की एक दिल हिला देने वाली अपील की। मगर उन्होंने उसका वैसा जवाब नहीं दिया जैसा कि वह चाहते थे। वे लोग शामिल नहीं हुए। उनकी आंखें उन नये सुधारों की ओर लगी हुई थीं, जो मांटेगू-चैम्सफोर्ड सिफारिशों के फलस्वरूप आने वाले थे। उनके इनकार कर देने से पिताजी के दिल को बड़ा दुःख पहुंचा और इससे उनके और माडरेटों के दिल की खाईं और चौड़ी हो गयी।

अमृतसर-कांग्रेस पहली गांधी-कांग्रेस हुई। लोकमान्य तिलक भी आये थे और उन्होंने उसकी कार्रवाई में प्रमुख भाग लिया था। मगर इसमें कोई शक नहीं कि प्रतिनिधियों में अधिकांश और इससे भी ज्यादा बाहर की भीड़ में अधिकतर लोग अगुआ बनने के लिए गांधीजी की ओर देख रहे थे। हिन्दुस्तान के राजनैतिक क्षितिज में 'महात्मा गांधी की जय' की आवाज बुलंद हो रही थी। अली-बंधु हाल ही में नजरबंदी से छूटे थे और सीधे अमृतसर-कांग्रेस में आये थे। राष्ट्रीय आंदोलन एक नया रूप धारण कर रहा था और उसकी नयी नीति का निर्माण हो रहा था।

1920 में राजनैतिक और खिलाफत-आंदोलन दोनों एक ही दिशा में और एक साथ चले और कांग्रेस के द्वारा गांधीजी के अहिंसात्मक असहयोग के मंजूर कर लिये जाने पर आखिर दोनों एक साथ मिल गये। पहले खिलाफत-कमेटी ने उस कार्यक्रम को अपनाया और 1 अगस्त को लड़ाई जारी करने का दिन मुकर्रर हुआ।

('मेरी कहानी' से साभार) ❑

उद्योग के आज के वैश्विक आंकड़े चौंकाने वाले हैं। दुनियाभर में आज यह उद्योग सालाना 1800 लाख करोड़ तक पहुंच चुका है। अर्थात दवा के बाजार से भी तीन-चार गुना।

इसमें आरोग्यपूर्ण एवं जैविक-विषमुक्त खेती उद्योग 300 लाख करोड़ रुपये, आधुनिक व्यायामशाला 200 लाख करोड़ रुपये, सौन्दर्य बढ़ाकर उम्र छुपाने वाले उत्पादन 600 लाख करोड़ रुपये, वैयक्तिक स्वास्थ्य सेवा 200 लाख करोड़ रुपये वैकल्पिक औषधियां (आयुर्वेद, यूनानी, चीनी, नेपाली, सिद्ध आदि) 6 लाख करोड़ रुपये और बाकी जीवनशैली विषयक उत्पादन, प्रशिक्षण तथा निरोगी रहने की सेवाएं आदि। इसके अलावा स्वास्थ्य पर्यटन (हेल्थ टूरिज्म) का व्यवसाय 300 लाख करोड़ तक पहुंच गया है और इसमें हर वर्ष 12.5 प्रतिशत की दर से बढ़ोतरी हो रही है। ब्यूटी पार्लर देहातों में पहुंच गये हैं और 'स्पा' नामक आविष्कार तो अब आपको शिर्डी जैसे तीर्थ स्थानों पर भी देखने को मिलेगा। प्रत्येक पर्यटन केन्द्र और आयुर्वेदिक डॉक्टर के पास ये सुविधाएं उपलब्ध हैं। यह व्यवसाय अब 3.5 लाख करोड़ तक पहुंच गया है। केरलीयन मसाज भी आपको कमोवेश जिला स्तर पर मिलेगा। भोजन की तमाम जैविक वस्तुएं अब सभी बड़े शहरों में आप जैविक किसानों से ऑनलाइन खरीद सकते हैं। मुम्बई, पुणे में तो यह व्यापार शुरू हुए 10 साल हो गये हैं। आश्चर्य नहीं कि आने वाले दिनों में कोकाकोला कंपनी ही नींबूरस, गन्नारस, आम का पना बाजार में लाये। आज तक तो उन्होंने ही हमें जहर पिला कर कैंसर जैसे रोग बढ़ाये और अपनी दवाइयां खूब बेची। जब इलनेस इंडस्ट्री की सीमा आ गयी तो अब वे वेलनेस इंडस्ट्री के उत्पादन भी तो हमें ही बेचेंगे। अभी भी रामदेव, हल्दीराम तथा ऐसी अनेक छोटी कंपनियां रोज हमारे घर में बनने वाली चीजें जैसे कोकम शरबत, आंवला शरबत, जेम, 'जीरो' प्रतिशत फेट के बिस्कुट, व्हीट ब्रेड, साबुन, पेस्ट तक नैसर्गिक उत्पादन के नाम पर बाजार में ले आयी हैं। कोई बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनी इन्हें भी खरीद ले तो हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। गत 25 साल में बने नवलक्ष्मीदास, स्वास्थ्य के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील हो गये हैं।

वैकल्पिक औषधि एवं आयुर्वेदिक उत्पादनों की बिक्री में भारत दुनिया में दूसरे स्थान पर है। 1996 में जब हमने गोमूत्र आधारित पहली छः औषधियां बनायी, तब हम महाराष्ट्र में इसके एकमेव उत्पादक थे। इन्हें बिक्री के लिए नहीं बनाते थे। हमारे फार्मूले से जिसने उत्पादन शुरू किया वह सेवाभावी आदमी था, पर उसके बाद आने वालों ने कंपनियां बना डालीं। सन् 2004 में देश में इसकी 42 कंपनियां थीं जो सालाना 72 करोड़ का व्यापार करती थीं। आज ऐसी दवाएं, जैविक कीटनाशक, गोबर-गोमूत्र से बने साबुन, शैम्पू आदि बनाने वाली छोटी-छोटी कंपनियों का व्यवसाय 1000 करोड़ रुपये से ज्यादा है। अब वह 'काऊ थेरपी' बन गया है। अब तो गोबर की गणेश मूर्तियां भी बाजार में आ गयी हैं।

वर्ष 2014 में भारत में कुल स्वास्थ्य उद्योग 16200 करोड़ रुपये का था। केवल भारत में इस आरोग्य विषयक बाजार की क्षमता का 40 प्रतिशत हिस्सा खान-पान का है। हमारे देश में आरोग्य विषयक सेवाओं की जननी कही जाने वाले आयुर्वेद, यूनानी, सिद्ध, योग (सॉरी, अब योगा कहना उचित होगा) और निसर्गोपचार के लिए गत दशक में 'आयुष' मंत्रालय की स्थापना क्या दर्शाती है? वे रुग्ण सेवा नहीं बल्कि आप बीमार न हों, इसके लिए आरोग्य उद्योग बढ़ाने में लगे हैं।

भारत में हजारों औषधि वनस्पतियां हैं। औषधियां और आरोग्यप्रद खाद्य पदार्थ बनाने में 9000 लघु एवं मध्यम उद्योग कार्यरत हैं। वे प्रति वर्ष 12000 करोड़ के स्वास्थ्य उत्पाद बनाते हैं। छोटे उद्योगों को भारतीय बड़ी कंपनियां और बहुराष्ट्रीय कंपनियां लील गयीं। इसी तर्ज पर योग का भी बाजार करने पर मेरा एक चालीस साल का मित्र बोला 'मुझे यह नुकसान वाला मुद्दा समझ में नहीं आया।' मैंने कहा, 'देखो, फलां-फलां व्यक्ति बहुत कमाता है।' पर पारिवारिक कारणों से हृदय रोग हो गया, दूसरे को व्यावसायिक तनावों से डायबिटीज हो गयी, तीसरे को बैठे काम से मोटापे ने जकड़ लिया और चौथे को मानसिक असंतुलन हो गया। ये लोग अगर स्वास्थ्य सेवाएं लेंगे अर्थात जिम जायेंगे, जैविक भोजन लेंगे, योगा करेंगे तो निरोगी रहकर अधिक एकाग्रता से काम करते हुए नये-नये हुनर, तंत्र, कौशल सीखेंगे। तब उन्हें और कंपनी की आय में वृद्धि होगी। अर्थात देश की जीडीपी में वृद्धि होगी। यदि ये लोग इस उद्योग की सेवाएं ना खरीदें तो देश का नुकसान होगा की नहीं? वही है 9 लाख करोड़ का नुकसान। समझे?'

हमें इस पर विमर्श करना चाहिए कि स्वास्थ्य को उद्योग बनाने की चाल किसकी है? यह ना होता तो जो रोजगार इससे पैदा हुआ है उन्हें हम क्या विकल्प देते? बढ़ती जनसंख्या को रोजगार कैसे मिलेगा? स्वास्थ्य उद्योग का अगला कदम और भविष्य कैसा होगा? इससे कौन लाभान्वित होंगे और कौन बर्बादी की कगार पर धकेले जायेंगे? विकसित देशों में इसका क्या हाल है और विकासशील देशों के गरीबों का क्या होगा? ❑

'सर्वोदय जगत'
के सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों,
लेखकों व शुभचिन्तकों को
'दीप-पर्व : दीपावली'
के शुभ अवसर पर
सर्व सेवा संघ,
सर्व सेवा संघ प्रकाशन
एवं
'सर्वोदय जगत' परिवार
की ओर से
ढेर सारी बधाइयाँ
व
हार्दिक शुभकामनाएँ!

पर्यावरण

टिहरी बांध के चारों ओर भूस्खलन : बीमारी के साये में लोग

❑ सुरेश भाई

टिहरी बांध निर्माण के दौरान डॉ. खड़क सिंह बाल्दिया और डॉ. विनोद गौड़ जैसे वैज्ञानिकों व भूगर्भविदों द्वारा भूस्खलन एवं बीमारी की आशंका प्रकट गयी थी। उस समय इसे उतना गंभीरता से नहीं लिया गया। लेकिन यह अब सच साबित हो गया है। सन् 2004 में टिहरी बांध जलाशय में दर्जनों गांव डुबाने का सच सबके सामने आया है। इसके बाद आशंका थी कि जलाशय की नमी से चारों ओर की चट्टानें अस्थिर हो सकती हैं। अब इसका प्रभाव धीरे-धीरे पिछले 10 सालों में बांध के चारों ओर असंख्य भूस्खलन एवं दरारों के रूप में सामने आ गयी है। 42 वर्ग किलोमीटर में फैली झील के ऊपर टिहरी एवं उत्तरकाशी के 140 गांव पर भूस्खलन का संकट मंडरा रहा है।

गौरतलब है कि हिमालय क्षेत्र में अभी मौजूद एवं निर्माणाधीन बांध स्थलों की विस्तृत प्रभावों को लेकर कोई अध्ययन नहीं है, जिसके आधार पर खड़े किये जाने वाले ढांचे के प्रभाव के बाद की स्थिति का विस्तृत ब्यौरा दिया जा सकता हो। जिसके बाद प्रभावित समाज अपने बचने के रास्ते ढूंढ सकें।

टिहरी बांध विरोधियों, पर्यावरणविदों एवं वैज्ञानिकों की सलाह पर सन् 1980 में पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा एस. के. राय की अध्यक्षता में बांध के पर्यावरण प्रभावों पर गठित कार्यकारी दल की रिपोर्ट में भी कहा गया था कि यहां चारों ओर जितनी भी चट्टानें हैं, वह बहुत कमजोर एवं विखंडनशील हैं। इस बांध की परियोजना रिपोर्ट में भी स्वयं यह बात स्वीकार की गयी है कि जितनी भी चट्टानें बाहर दिखायी देती हैं, मुख्यतः वे सभी की सभी नाजुक और क्षरणशील हैं। वॉडिया भूगर्भ विज्ञान संस्थान के वैज्ञानिक डॉ. मजारी ने नवंबर 1983 में कार्यकारी दल को रिपोर्ट सौंपी थी, जिसमें बताया गया था कि बांध जलाशय के चारों ओर की जमीन में अस्थिरता और भूस्खलन के हालात पैदा हो सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि इससे कृषि योग्य भूमि नष्ट हो जायेगी तथा जलाशय की परिधि के गांव असुरक्षित हो जायेंगे।

कार्यकारी दल की रिपोर्ट के बाद तत्कालीन टिहरी बांध प्राधिकारियों में हड़कम्प मची, उन्होंने इस रिपोर्ट के निष्कर्षों को गलत ठहराने का प्रयास किया, लेकिन डॉ. मजारी द्वारा पहाड़ी ढलानों की स्थिरता को लेकर बनाये गये मानचित्र का जवाब वे अब तक नहीं दे सकें। उसका उत्तर भूस्खलन के रूप में मिल रहा है, जहां बरसात की रातों में लोग खौफ में जीते हैं।

भारतीय संस्कृति निधि (इंटैक) द्वारा प्रकाशित टिहरी बांध की रिपोर्ट पर गौर किया जाय, तो जिन गांव के लगभग डेढ़ लाख लोगों को पहले विस्थापित किया गया है, इतने ही संख्या में झील के चारों ओर संकट में रह रहे लोगों को अन्यत्र बसाना आवश्यक हो जायेगा।

टिहरी बांध में समाहित भागीरथी और भिलंगना नदियों के किनारों पर अनेक स्थानों पर भूस्खलन क्षेत्र है। इनमें से कंगसाली, डोबरा तथा स्यांसू के ऊपर नदी धारा पर स्थित भूस्खलन क्षेत्र प्रमुख है। इसी तरह रोलाकोट के आसपास भूस्खलन क्षेत्र बन जाने की सम्भावना व्यक्त की गयी थी। भिलंगना घाटी में नंदगांव, खांड, गडोलिया आदि कई स्थान चिह्नित किये गये थे। इन सभी क्षेत्रों में, मौजूदा स्थिति में भूस्खलन की समस्या पैदा हो गयी है। हर साल बांध में पानी बढ़ने और कम होने के प्रभाव से यहां के गांव अस्थिर हो गये हैं, जिन्हें ऊंची अदालतों के सामने नतमस्तक होकर पुनर्वास के लिए राज्य सरकार को सूचित करवाना पड़ता है।

दूसरी ओर टिहरी बांध के चारों ओर सौड़, डांग, मोटणा, भैंगा, जसपुर, डोबरा, पलाम, भल्डियाना और धरवालगांव में मलेरिया और वाइरल का प्रकोप फैल रहा है। 7-8 सितंबर, 2015 को सौ से अधिक लोगों को तेज बुखार, सिर-दर्द, बदन-दर्द होने से नये टिहरी जिला अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। और दो लोगों की मौत भी हुई है। इसका कारण है कि टिहरी झील का जलस्तर ऊपर बढ़ने से झाड़ियों और अन्य स्थानों पर मच्छर पैदा हो गये हैं, जो झील से सटे ग्रामीण क्षेत्रों में भारी परेशानी पैदा कर रहे हैं। झील के किनारे बहकर आयी लकड़ी और अन्य गंदगी भी इसका कारण है। यहां झील के किनारे रहने वाले लोगों का कहना है कि झील के पानी में उन्हें दुर्गन्ध महसूस हो रही है। टिहरी जल विकास निगम कई स्थानों पर अपने वैज्ञानिकों को भूस्खलन क्षेत्र के उपचार के लिए भेजता है, लेकिन उनके जलाशय से उत्पन्न भूस्खलन को वे नहीं रोक पा रहे हैं। तो बीमारी का इलाज तो इससे भी मुश्किल है।

पहाड़ों की शांत वादियों और संतुलित पर्यावरण को बिगाड़ने वाली विकास की इस

शैली का उत्तर कैसे दिया जाए। यह तभी सम्भव है जब इसकी वैज्ञानिक सत्यता को नकारने की राजनीति बंद होगी, और इस पर प्रभावित क्षेत्रों के बीच जाकर प्रभावों का विवेकपूर्ण ढंग से आंकलन करना प्राथमिकता हो।

टिहरी बांध पर 2000 मेगावाट के हिसाब से निर्माण के 35 वर्षों में अरबों रुपये खर्च हुए थे, लेकिन इसकी सच्चाई देखें तो छिपी सूचना के आधार पर एक हजार मेगावाट विद्युत ही पैदा करती है। जो न यहां के प्रभावितों को रोशन कर सकी और न ही पलायन रोक सकी है। स्थानीय स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली ऐसी परियोजना के निर्माण में पहले लोगों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार की जरूरत है।

टिहरी बांध से उत्पन्न भूस्खलन, बीमारी, विस्थापन के अलावा एक और समस्या है, जिस पर खामोशी बनी है, वह है बांध में लगातार बढ़ रहे 'गाद' के कारण जल स्तर ऊपर उठ रहा है। भागीरथी और भिलंगना नदियों की 20 सहायक जलधाराएं हैं, जहां से मौजूदा हालात में भूस्खलन जारी है। टनों मलवा बांध में जमा हो रहा है, जिसके कारण बिजली उत्पादन और बांध की उम्र पर भी सवाल खड़ा होता है। एक अनुमान है कि प्रतिवर्ष वास्तविक गाद 16.53 हेक्टेयर मीटर/100 वर्ग किलोमीटर झील में भर रहा है। इससे डेल्टा बनने के प्रमाण सामने आ रहे हैं। इन सच्चाइयों को वैज्ञानिकों ने पहले ही अपनी दर्जनों रिपोर्टों में खुलासा किया है, जिसे रोज ही खारिज किया जाता है, लेकिन प्रकृति इसका उत्तर दे रही है।

इसलिए जहां पर इस तरह की विशालकाय विस्थापन जनित विकास परियोजना बनती है। वहां पर पहले प्रतिकूल प्रभावों को ध्यान में रखकर भी सोचा जा सकता है। ऐसे तथ्यों से रोज ही किनारा कसी नहीं की जानी चाहिए। ❑

प्राकृतिक आपदा व किसान

आखिर कौन बचाएगा प्राकृतिक आपदाओं से हमें

❑ **ज्ञानेन्द्र रावत**

आपदाएं कभी कह कर नहीं आतीं। इसलिए उनसे बचाव के प्रयास आपदा के समय सरकारें यथासंभव करती ही हैं। इस सच्चाई को नकारा नहीं जा सकता। फिर भी आपदा से होने वाले नुकसान की भरपाई नहीं की जा सकती। हां उसे कुछ हद तक कम जरूर किया जा सकता है। इस कटु सत्य को झुठलाया भी नहीं जा सकता। इसमें दो राय नहीं है। उस स्थिति में जबकि भारत में आपदाओं की आशंका हर समय बनी रहती है।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि हमारे देश में खासकर पर्यावरण से जुड़ी आपदाएं सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और पारिस्थितिकीय क्रियाओं के बीच के दुरूह और जटिल पारंपरिक-पारस्परिक प्रभावों के कारण घटित होती हैं। इनमें प्रमुख हैं बाढ़, ओलावृष्टि, चक्रवाती तूफान, सूखा, भूकम्प, शीतलहर, लू और सुनामी आदि-आदि जो हर साल कमोबेश हजारों-लाखों जिन्दगियों को अनचाहे मौत के मुंह में खींच ले जाती हैं और हम मूकदर्शक बने देखते रहने को विवश हैं।

इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हमारे यहां प्राकृतिक आपदाओं के इतने भयावह खतरों के बावजूद उनसे निपटने की तैयारियां आधी-अधूरी हैं। या इसे यूं कहें कि उन तैयारियों का पूरी तरह अभाव है, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। दरअसल इस साल भारत समेत कई देश भयंकर सूखे की चपेट में हैं।

वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि इस साल प्रशांत महासागर में अलनीनों के विकराल रूप धारण कर लेने के कारण समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया की तकरीबन एक अरब से ज्यादा आबादी किसी-न-किसी आपदा की शिकार होगी। भारत से लेकर पापुआ न्यूगिनी तक भयंकर सूखा पड़ेगा और पश्चिमी प्रशांत महासागर क्षेत्र के देशों में सुपर टाइफून भीषण तबाही मचायेंगे, गर्मी अपना विकराल रूप धारण करेगी। मौजूदा हालात वैज्ञानिकों के दावों की जीती-जागती मिसाल है।

असलियत यह है कि मानसून के उत्तरार्द्ध में मध्य और दक्षिण भारत में गंगा नदी घाटी के ऊपरी हिस्से में बारिश औसत के नीचे होने के कारण सूखे का संकट गहरा गया है। इसका प्रभाव दक्षिण पूर्व एशिया के भारत, चीन, मलेशिया, इंडोनेशिया और पापुआ न्यूगिनी में विकराल रूप धारण कर लेगा।

नतीजन इसके कुछ इलाकों में पॉम ऑयल, ज्वार, गेहूं और धान की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। अंतर्राष्ट्रीय अमरीकी मौसम विज्ञानी जैसन निकोल्स की मानें तो अलनीनों के कारण इस समय पूर्वी पाकिस्तान और पश्चिमी-पूर्वी भारत सूखे की भयंकर चपेट में है।

देश में आज तकरीबन 300 जिले सूखे के चपेट में हैं। सरकार द्वारा चलायी जाने वाली बीमा योजनाएं किसानों के लिए छलावा साबित हो रही हैं। वे तो किसानों के बजाय

बीमा कंपनियों के लिए अधिक लाभ का सौदा साबित हो रही हैं।

किसान खुद को ठगा-सा महसूस कर रहा है। एसोचैम स्काइमेट का अध्ययन इसका खुलासा करता है। यह स्थिति की भयावहता का सबूत है। सूखे की मार के चलते देश में किसानों की आत्महत्याओं का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा है। आये दिन इसमें हो रहा इजाफा चिन्तनीय है। चिन्ता की बात तो यह है कि सरकार और समाज इसका हल ढूंढ पाने में नाकाम रहे हैं। यह विचारणीय है।

पिछले साल अधिक बारिश और ओलावृष्टि के चलते भारी मात्रा में बर्बाद फसल का मुआवजा किसान को आज तक नहीं मिल सका है। उसके ऊपर कपास के किसानों की बदहाली ने तो उनकी कमर ही तोड़ दी है। उनकी बदहाली का जायजा इसी से लग जाता है कि आज से पहले कपास के उत्पादक ये किसान कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्र, महाराष्ट्र और गुजरात में आत्महत्या करने को विवश थे, लेकिन अब वे तंगहाली में पंजाब में भी आत्महत्या करने को मजबूर हैं।

इसका मुख्य कारण सफेद मक्खी है जिसने उनकी कपास की फसल चौपट कर दी है। विडम्बना यह कि इसके बावजूद किसानों को आपदा से बचाने की दिशा में कोई कारगर प्रयास दिखाई नहीं दे रहे। न ही कोई मुआवजा नीति ही ऐसी है जिससे किसानों को राहत मिल सके। हालत यह है कि इस दिशा में देश में आजादी के छह दशक बाद भी कुछ नहीं बदला।

सरकार आज भी अंग्रेजों के नक्शेकदम पर ही चल रही है। किसानों के आगे सरकार चंद कागज के टुकड़े डालकर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेती है। दुख की बात यह है कि इन राहत के चंद टुकड़ों के लिए भी उसे सरकारी दफ्तरों के चक्कर-दर-चक्कर काटने पड़ते हैं। वह भी मिल जाये तो गनीमत समझो। कारण फसल के नुकसान का सही मूल्यांकन भी आसान नहीं होता। इसमें भी सरकारी नियम-कायदे आड़े आ जाते हैं।

नियम के अनुसार प्राकृतिक आपदा का मुआवजा तब तक उस किसान को नहीं मिल सकता जब तक कि उस किसान के आसपास के क्षेत्र में उस आपदा से बड़े पैमाने पर नुकसान न हुआ हो। यह सब पटवारी की इच्छा पर निर्भर करता है। इसके लिए आज तक कोई पैमाना ही नहीं बना। वे तो तैंतीस प्रतिशत से ज्यादा मुआवजे की पर्ची बनाते ही नहीं चाहे किसान का कितना भी बड़ा नुकसान क्यों न हुआ हो।

ऐसा लगता है कि जैसे सरकारी कर्मचारियों-अधिकारियों के दिलोदिमाग का दिवाला निकल गया है। बिना रिश्वत के किसान को मुआवजा मिल पायेगा इसमें संदेह है। यह स्थिति हरेक आपदा के समय होती है। वह चाहे बाढ़ की स्थिति हो, ओलावृष्टि हो, तूफान हो, शीतलहर हो, भूकम्प हो, सूखा हो या फिर चक्रवाती तूफान या लू वगैरह कोई भी क्यों न हो, सरकारी कर्मचारी-अधिकारी सभी का रवैया एक जैसा ही रहता है। इसे नेता-अफसर और मंत्री सब जानते हैं।

सूखा राष्ट्रीय आपदा है, कह देने भर से काम नहीं चलता। उससे निपटने को तो दृढ़ इच्छा और संकल्पशक्ति चाहिए जिसका नेतृत्व में पूर्णतः अभाव दृष्टिगोचर होता है।

वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि देश में पड़े सूखे की भयावहता से नेपाल, दक्षिण-मध्य चीन में तूफान की स्थितियां पैदा होंगी। हिमालय क्षेत्र में जल्दी सीजन की शुरुआत होगी। इसके अलावा चीन, कोरिया, ताइवान और जापान में सुपर टाइफून का खतरा अक्टूबर माह के आखिर तक बना रहेगा। दरअसल आज देश का तकरीबन 70 फीसदी से अधिक इलाका चक्रवर्ती तूफान और सुनामी की आशंका के साये में रहने को विवश है। जबकि तकरीबन 60 फीसदी हिस्सा भूकम्प की आशंका से ग्रस्त रहता है।

इसके अलावा तरीकबन 12 फीसदी से अधिक का इलाका बाढ़ की आशंका से घिरा रहता है। बाढ़ से तकरीबन देश को 7.8 अरब डालर का नुकसान उठाना पड़ता है। जबकि और आपदाओं को मिलाकर हमारा देश कुल मिलाकर 9.8 अरब डालर का नुकसान उठाता है। यह विचारणीय है। वह बात दीगर है कि हमारी एनडीआरएफ की टीमों ने नेपाल में आये विनाशकारी भूकम्प के दौरान बहुत ही सराहनीय और प्रशंसनीय कार्य किया है, लेकिन इस सच्चाई से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि वह कुशल मानव संसाधन, प्रशिक्षण और अतिआधुनिक साजोसामान की कमी का सामना कर रही है।

कैग की रिपोर्ट ने इस तथ्य का खुलासा कर दिया है कि आपदा प्रबंधन का आपदा न्यूनीकरण योजनाओं में प्रदर्शन बेहद खराब है। असलियत में हमारे यहां राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन एजेंसी का दायित्व आपदा प्रबंधन की खातिर योजनाओं, नीतियों के निर्माण और उसकी दशा-दिशा के निर्धारण का है लेकिन वह अपने दायित्व का सही ढंग से निर्वहन में नाकाम रही है।

ऐसी स्थिति में एक ऐसी आपदा प्रबंधन एजेंसी की महती आवश्यकता है, जिसमें तात्कालिक रूप से निर्णय लेने की क्षमता हो जिसके दूरगामी प्रभाव हों। उसकी स्पष्ट पुनर्वास नीति हो, आधुनिक विज्ञान और तकनीक के जरिए फसल के नुकसान और उसके उचित मूल्यांकन के साथ मुआवजे की ऐसी योजना बनायी जाये जो सभी पक्षों को स्वीकार्य हो।

प्राचीनकालीन परम्पराओं का पूर्वजों के अनुभवों के साथ ईमानदारी और सूझ-बूझ से प्रयोग किया जाये जिसके चलते अकाल और सूखे जैसे हालात का देश को सामना न करना पड़े और योजना निर्माण में व्यापक दृष्टिकोण हो, तभी कुछ बदलाव की उम्मीद की जा सकती है और आपदा के प्रभाव को कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

(इंडिया वाटर पोर्टल, हिन्दी) ❑

नारी की महिमा

स्त्री को नकारने की साजिश

❑ मोइन काजी

धान के खेत में झुकी हुई महिला, बोरी या टोकरी को उठाने के लिए झुकी हुई महिला, बच्चे की देखभाल के लिए झुकी हुई महिला, कुएं से पानी निकालने में झुकी महिला, कसीदाकारी करती किसी कपड़े पर झुकी महिला या हर समय झुकी हुई दिखती महिला। क्या यह लचीलेपन की कोई विशिष्ट छवि है? शायद नहीं। इन उपमाओं से यह समझ में आता है कि स्त्रियों का काम कभी खत्म ही नहीं होता। एक ग्रामीण महिला की सबसे जीवन्त और तेजस्वी छवि गांवों में साफ आसमान और तीखे सूर्य के तले दिनभर रोजंदारी पर खेत में मजदूरी करते हुए या अपने ही खेत में काम करते हुए, या घंटो-घंटे झुककर दोहरे होते रहने के बाद अपनी टांगे सीधे करते हुए, फावड़ा-कुदाली चलाते हुए, खरपतवार उखाड़ते हुए या बुआई करते हुए दिखायी पड़ती है।

कई बार वह पीठ में बच्चों को बांधे कार्य करती दिखती है। इस दौरान उसे केवल तभी आराम मिलता है जबकि उसका बच्चा भूख से रो पड़ता है और मां खेत के किसी कोने में ले जाकर उसे पुचकारती है। कई बार तो वह सुबह साढ़े पांच बजे ही खेत पर पहुंच जाती है और दोपहर में जबकि सूर्य आसमान में चढ़कर बेहद गर्म हो जाता है तब तक भी उस विकट परिस्थिति में कार्य करती रहती है। आदमी तो मौसमी कार्य जैसे जमीन साफ करना या पशुओं की सहायता से खेत की जुताई जैसे काम करता है। महिलाएं ही वह व्यापक व अदृश्य सेवाकर्मी हैं जो कि हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। और इस ''दोयम दर्जे की नस्ल'' के कार्यों की गणना किसी भी आंकड़े में हमारे सामने नहीं आती।

''पारम्परिक'' भारतीय महिला गांवों में रहती है। वह या तो किसी ऐसे छोटे किसान परिवार से आती है, जिसके पास एक एकड़ से भी कम भूमि होती है या फिर वह भूमिहीन परिवार से होती है। वह छुटपुट कार्यों और मजदूरी के लिए किसी बड़े किसान की सनक पर निर्भर रहती है। सामान्यतः वह खेतों में कार्य करती हैं यानि फसल काटना, पौधा-रोपण करना और खरपतवार उखाड़ना।

इस कार्य के लिए उसे अक्सर 20 रुपये प्रतिदिन से कम या उतने ही कार्य के लिए पुरुषों को जितना मिलता है, उससे आधा ही मिलता है। अल सुबह उठकर वह अपने आसपास का व घर का काम करती है और परिवार का ख्याल रखने के साथ ही साथ पति की सनक भी सहन करती है। करोड़ों महिलाएं दिन भर खेतों में काम करके पैसा भी कमाती हैं। इसके बावजूद शाम को घर लौटने पर खाना बनाती हैं और अन्य कामों में लग जाती हैं। यह महिलाएं सभी मामलों तथा कठोर श्रम, पहल करना, संयम एवं सामंजस्य बनाने में पुरुषों से कमतर नहीं होतीं। आर्थिक तौर पर निचली पायदान पर पड़ी महिलाओं के मत्थे ऐसे पति मढ़ दिये जाते हैं जो केवल शराब पीते हैं और बच्चे पैदा करते रहते हैं। इसके बावजूद महिलाएं सूर्योदय से सूर्यास्त तक काम करती हैं, अपने परिवारों की मदद करती हैं जिसमें उनके बिगड़ैल पतियों को शराब के लिए पैसे देना भी शामिल है।

उसे अपने श्रम यानी इन पूर्णकालिक कार्यों के साथ ही साथ परिवार व बच्चों का भी ध्यान रखना पड़ता है। इस काम में उसका पति उसकी मदद नहीं करता। इतना ही नहीं वह घर पर जो कार्य करती है उसे महत्त्व भी नहीं देता। एक ग्रामीण महिला प्रतिदिन अपना जीवन शून्य से आरम्भ करती है। वह सदियों से कोल्हू के बैल की तरह पिस रही है और इतने व्यापक कालखंड में उसमें और उसकी बनायी चपाती की बनावट में फर्क नहीं आया। एक चपाती (रोटी) बनाने के लिए स्त्री को पानी की आवश्यकता पड़ती है। जिसके लिए अक्सर उसे मीलों पैदल चलना पड़ता है। रोटी पकाने के लिए उसे ईंधन भी चाहिए होता है, जो उसे लकड़ियों या गोबर के रूप में मिलता है। लकड़ी उसे खुद इकट्ठा करना पड़ता है और कंडे भी खुद ही थापने पड़ते हैं। गोबर प्राप्त करने के लिए आवश्यक है गाय को चारा खिलाया जाए। इस हेतु घास प्राप्त करने के लिए भी मीलों पैदल चलना पड़ता है। वैसे वह परिवार खुशकिस्मत माना जाता है जिसके यहां गाय हो। अंत में जिस मिट्टी के चूल्हे पर वह रोटी तैयार होती है और वह मिट्टी लिपी जमीन और चूल्हा भी उसे ही तैयार करना पड़ता है। इसके अलावा चूल्हे पर रोटी बनाते समय वह एक बच्चे को दूध पिला रही होती है और बाकी तीन का ध्यान रख रही होती है। यदि उपरोक्त में से कोई भी कार्य वह धीमे-धीमे करती है या कभी-कभार नहीं कर पाती तो, उसका पति मानता है कि पत्नी की पिटाई उसका विशेषाधिकार है। इस सबके बावजूद वह अपने पति को अनिवार्यतः परमेश्वर ही मानती है। जबकि गांव की एक महिला को प्यार, सहनुभूति और आपसी समझ की आवश्यकता है।

एक भारतीय महिला की राह में अनेक रोड़े हैं। इसमें प्रमुख हैं कृषि भूमि से संबंधित वंशानुगत कानूनों का पुरुषों के पक्ष में होना, बेटे को प्राथमिकता, पितृसत्तात्मक विवाह संस्था, निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की बलात अनुपस्थिति आदि। बहुत कम ग्रामीण महिलाओं के पास भूमि का स्वामित्व है। इसी वजह से वह अपनी और अपने परिवार की गरीबी समाप्त करने में असफल

हो जाती हैं। वे सिर्फ परिस्थितियों की शिकार नहीं हैं बल्कि विपरीत सामाजिक व्यवहार की भी शिकार हैं। वे संस्कृति से ज्यादा अप्रासंगिकता की शिकार हैं। इसके बावजूद महिलाएं उभरने का प्रयास कर रही हैं। शहरी महिलाएं कुछ हद तक अलग तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। यदि देश को एक स्वस्थ व जटिलताविहीन महिला अनुपात तैयार करना है तो उसे ग्रामीण महिला का चेहरा बदलना ही होगा। गौरतलब है कि बिना उसके कोई घर नहीं चल सकता। फिर चाहे परिवार नियोजन को लें या शिक्षा को या बच्चे पैदा करने या उनकी देखभाल करने का काम। वैसे यह सब उनके पारम्परिक कर्तव्य ही माने जाते हैं।

ग्रामीण महिला ने अपनी पारम्परिक भूमिका से परे जाकर आधे विश्व के खाद्य उत्पादन की जिम्मेदारी ले ली है और वह अधिकांश विकासशील देशों में 60 से 80 प्रतिशत तक भोजन का उत्पादन करती हैं। छोटी जोत की खेती तो कमोवेश महिलाओं के ही भरोसे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं ही द्वितीयक फसल पैदा करती हैं, भोजन व ईंधन इकट्ठा करती हैं। परिवार के लिए खाने का भंडारण व पकाने का काम करती हैं और परिवार के लिए पानी भी भर कर लाती हैं।

यह सब कुछ उन परिस्थितियों में हो रहा है जिसे हम महिला सशक्तिकरण युग कहते हैं। ऐसा काल जिसमें स्थानीय स्वशासी संस्थाओं में उन्हें 33 प्रतिशत आरक्षण दिया जा चुका है और राष्ट्रीय राजनीति में उनके लिए विशेष आरक्षण को लेकर जोर-शोर से बहस जारी है। मूलभूत समस्या यह है कि उसके सशक्तिकरण को बहुत संकीर्ण नजरिए से देखा जा रहा है। उसका वास्तविक क्रियान्वयन कर्कश वाचलता में कहीं खो गया है। वित्तीय सशक्तिकरण ने उसे घर से बाहर जाने और कार्य करने की स्वतंत्रता तो दी है परंतु उसे अपने और अपने आनंद के लिए स्वतंत्रता नहीं दी है। यह स्वतंत्रता उसे परिवार की आमदनी बढ़ाने या उसके पति या अन्य पुरुष सदस्यों का खेती का बोझ कम करने के लिए दी गयी है। ❑

गतिविधियां एवं समाचार

महिलाएं साकार करें ग्रामस्वराज की कल्पना

सर्व सेवा संघ द्वारा नवगठित राजस्थान प्रदेश सर्वोदय मंडल के तत्त्वाववधान में तथा प्रदेश सर्वोदय मंडल की अध्यक्ष श्रीमती आशा बोथरा और मंत्री श्रीमती शशि त्यागी के सफल संयोजन में गत 25 से 27 सितंबर, 2015 तक तीन दिवसीय निम्न कार्यक्रम आयोजित हुए। कार्यक्रमों की सार्थकता के लिए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही अपने मंत्रियों के साथ पूरे समय उपस्थित रहकर अपना मार्गदर्शन दिये एवं निर्णयों के साक्षी बने रहे।

1. ग्रामीण महिला शांति सैनिक शिविर : शिविर में प्रदेश के विभिन्न जिलों से लगभग 90 शिक्षित ग्रामीण बहनों ने आयोजित कार्यक्रमों में पूरे समय उत्साह के साथ भाग लेते हुए संकल्प लिया कि वे अपने-अपने क्षेत्र में गांधी-दर्शन प्रणीत कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार करेंगी। और, तदनुसार प्रभावी कार्यक्रमों का संयोजन-नियोजन करते हुए प्रदेश सर्वोदय मंडल के साथ अपना जुड़ाव और क्रियात्मक लगाव बनाये रखेंगी। सभी बहनों को शिविर में भागीदारी का प्रशंसा-पत्र सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही के हाथों वितरित किये गये। इस शिविर में प्रदेश के लोक-सेवक रामदयाल खण्डेलवाल ने शिविरार्थियों को अपनी मंगलकामनाएं दीं।

2. सर्वोदय मंडल कार्यसमिति की बैठक : 27 सितंबर, 2015 को अपराह्न 2 बजे श्रीमती आशा बोथरा की अध्यक्षता में बैठक प्रारंभ हुई। 21 सदस्यों की भागीदारी रही। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष-मंत्रियों ने प्रबोधन-मार्गदर्शन दिया। बैठक का प्रारम्भ लोकसेवक रामदयाल खण्डेलवाल के वैचारिक भजन से हुआ। दो घंटे तक चली बैठक में वैचारिक क्रियाओं सहित गहन चर्चाओं में मुख्य रूप से निम्न निर्णय लिये गये।

1. प्रदेश के सभी जिलों में वांछित लोकसेवकों और सर्वोदय के संकल्प कार्यक्रम चलाकर जिला सर्वोदय मंडलों का गठन प्राथमिकता से किये जायें।

संपादक के नाम पत्र

माननीय संपादकजी और साथी

सप्रेम वन्दन!

'सर्वोदय जगत' 1-15 अगस्त, 2015 का अंक मिला। आभार! गांधी, विनोबा, जयप्रकाश नारायण, धीरेनदा आदि ने सर्व सेवा संघ और सघन क्षेत्र के विकास के बारे में शुरू से ही प्रयत्नशील रहे, जो अति महत्त्व का है। इसके बारे में हमारे 22 प्रांतों में क्या-क्या प्रवृत्ति इस समय चल रही है, इसकी कोई जानकारी सर्वोदय जगत से नहीं मिलती। आपसे प्रार्थना है कि आप इसकी जानकारी हर अंक में देते रहें।

सर्व सेवा संघ अधिवेशन एवं सर्वोदय समाज सम्मेलन, दिल्ली में इसके महत्त्व के बारे में ठोस आयोजन हो, तो लाभदायी होगा। सर्व सेवा संघ कार्यकारिणी बैठक में पारित प्रस्ताव पत्रिका में पढ़े। देश में शराब-बन्दी जल्द-से-जल्द होनी चाहिए। इसके लिए हमें क्या करना है इसकी बातें सर्वोदय जगत में देने की कृपा करें।

केशव शरण की कविताएं पढ़ी। प्रेरक है। 'हिन्द स्वराज्य और क्रेजी सभ्यता' सहित सभी लेख उपयोगी हैं। आनन्द हुआ। **–बसंत भाई,**

सर्वोदय आश्रम, माढ़ी, महेसाणा (गुजरात)

2. सर्वोदय के कार्यों को प्राथमिकता से एवं व्यापकता के साथ निम्न कार्यक्रमों को अंजाम दिया जाए :—

(क) रचनात्मक कार्यक्रम—पूरे प्रदेश में सर्वोदय विचार परिदृश्यों को व्यापक और गतिशील बनाया जाए।

(ख) संघर्षात्मक कार्यक्रम—अपनी शक्ति और साधनों के आधार पर प्रदेश में पूर्ण शराब-बंदी के लक्ष्य को लेकर आंदोलन चलाया जाये।

3. अखिल भारतीय सर्वोदय समाज सम्मेलन में भागीदारी : दिल्ली में आयोजित सर्वोदय समाज सम्मेलन में अधिक से अधिक लोकसेवकों की भागीदारी रहे, इसका प्रयास किया जाय।

श्रीमती शशि त्यागी ने सबका आभार प्रकट कीं, श्रीमती आशा बोथरा ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया। तदुपरांत सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष व मंत्रीगण के प्रबोधन के साथ सभा का समापन हुआ। —**रामदयाल खण्डेलवाल**

काव्य-धरोहर

'सत्याग्रह-गाथा'

❑ रामप्रवेश शास्त्री

जहां देश-हित की बातों का ध्यान नहीं रह जाता,
और प्रजा को निर्मम होकर बल से कुचला जाता।
वहां स्वदेशी और विदेशी चिन्तन ही घातक है,
शोषण-पीड़न करने वाला पामर है, पातक है।
आपस में सम्बन्ध गहन हैं साध्य और साधन का,
साधन शुद्ध स्वयं बन जाता सहज साध्य जीवन का।
पानी मथकर घी पाने की व्यर्थ न आस लगायें,
बोयें पेड़ बबूल अगर तो आम कहां से खायें।
गांधी का यह स्पष्ट कथन है 'साधन बीज समझिये,
और साध्य को उससे मिलने वाली चीज समझिये।
भूल न हो, अधिकार फर्ज से प्राप्त हुआ करता है,
कर्तव्यों का पुष्ट वृक्ष, मधु-पावन फल फलता है।
दुनिया क्या हथियारों पर ही केवल टिकी हुई है,
हिंसा घृणा और मत्सर के हाथों बिकी हुई है।
यदि ऐसा होता तो अब तक कुछ भी शेष न रहता,
दुनिया क्या इस दुनिया का कुछ भी अवशेष न रहता।
अस्वाभाविक बातों को इतिहास लिखा करता है,
सत्याग्रह का स्वाभाविक बातों से ही नाता है।
भानसहित अधिकारों हित दुख सहने की तैयारी,
सत्याग्रह की विशेषता यह आत्मशक्ति संचारी।
डरता नहीं किसी से जो डरता केवल ईश्वर से,
कोई काम नहीं कर सकता लालच से या डर से।
कहां जुल्म अन्यायी है वह बांध सके जो हमको,
सत्याग्रही न विचलित होता मौसम लाख विषम हो।
तन-बल, अस्त्र-शस्त्र-बल, पशु-बल यह न हमारा बल है,
अत्याचारी के जवाब में सत्याग्रह सम्बल है।
नहीं तोप-बल टिकने वाला कभी तपोबल सम्मुख,
तपकर ही निखरा करते हैं स्वर्ण और सच्चा सुख।
निर्भय है वह जो चलता है साथ मौत को लेकर,
प्राण-दान औरों को देता वह अपनी बलि देकर।
तन से हो दुर्बल, लेकिन वह मन से मनोजयी हो,
सत्याग्रह में बहुत जरूरी निष्ठा नित्य नयी हो।
सत्याग्रह तलवार दुधारी इसकी शान निराली,
जिस पर चली, चलायी जिसने, दोनों की खुशहाली।
रक्त निकाले बिना बनाती है विरक्त विश्वासी,
भोग छुड़ाकर योग सिखाती पावन है गंगा-सी।
जंग छिड़ा हो जैसा भी वह जंग मिटा देती है,
उसे न लगता जंग, अन्य का जंग छुड़ा देती है।
यह तलवार विचार-क्रांति की बेटी है इकलौती,
अजब धातु की बनी हुई है इसकी म्यान न होती।
ब्रह्मचर्य-पालन करता जो सत्याग्रही वही है,
नहीं किसी से भी डरता जो सत्याग्रही सही है।
करे गरीबी का जो स्वागत सत्याग्रही वही है।
सबसे करता प्रेम मुहब्बत सत्याग्रही सही है।
अगर उपेक्षा हुई सत्य की सत्याग्रह नहीं है,
चिन्ता जिसको हुई मृत्यु की सत्याग्रही नहीं है।
सब प्रकार से रहे अभय जो सत्याग्रह वही है,
सत्यव्रती जो ईश्वरमय हो सत्याग्रही सही है।
सत्याग्रह का पालन करना लोभ लाभ का चक्कर,
कैसे पार पहुंच सकता है दो नावों पर चढ़कर।
सत्य, सत्य कैसे रह सकता यदि छिपाव करना है,
उसे असत्य समझिये जिसका यदि बचाव करना है।
पराधीनता मिट सकती है केवल सत्याग्रह से,
भेद-भिन्नता मिट सकती है केवल सत्याग्रह से।
नयी जिन्दगी भारत में आ सकती सत्याग्रह से,
और गन्दगी भारत से जा सकती सत्याग्रह से।
भीख नहीं है आजादी जो मांगे से मिल जाये,
सीख नहीं सीधी-सादी जो कोई भी सिखलाये।
अपने ही भीतर से पैदा होती है आजादी,
सत्याग्रह का भार शौक से ढोती है आजादी।
आजादी की नींव स्वदेशी सत्ता इसकी दासी,
करुणा का बल सम्बल इसका यह है आत्म विकासी।
कोई वस्तु नहीं दुनिया में आजादी से बढ़कर,
इसकी रक्षा की जाती है शूली पर भी चढ़कर।

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1450